ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 26 मई 2019

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 26 मई 2019 से 01 जून 2019

ज्येष्ठ कृ. – 07 ● वि० सं०–2076 ● वर्ष 61, अंक 21, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 194 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,119 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

पटना में उपसभा बिहार के तत्त्वावधान में भजन संध्याओं की शृंखला

पटना में उपसभा बिहार के तत्त्वावधान में भजन संध्याओं की शृंखला आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा बिहार के तत्त्वावधान में विभिन्न डी.ए.वी. विद्यालयों में भव्य भजन संध्याओं का आयोजन किया गया।

दिनांक 6 मई 2019 को भजन संध्या बेलीरोड पर स्थित डी.ए.वी पब्लिक स्कूल के प्रांगण में आयोजित हुई। संगीत शिक्षिकाओं ने संस्कृत में स्वागत गीत गाकर आगत अतिथियों का स्वागत किया। तत्पश्चात डी.ए.वी गान के साथ भजन संध्या का दौर शुरू हुआ। श्री मनोज शास्त्री तथा अमर नाथ पाठक के मनमोहक भजन सुनकर एवं श्री संजय ठाकुर के तबला वादन से श्रोता आनंद मग्न हो रहे थे।

उपसभा प्रधान डॉ. यू.एस. प्रसाद ने इस कार्यक्रम के लिए आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली के प्रति आभार व्यक्त किया और उपस्थित लोगों के प्रति धन्यवाद प्रकट करते हुए भजन गायकों को सम्मानित किया।

दिनांक 7 मई 2019 को भजन संध्या का कार्यक्रम पटना की प्रसिद्ध कालोनी पाटलिपुत्र में स्थित डी.ए.वी स्कूल में हुआ।

विद्यालय के संगीत शिक्षकों श्री रामकृष्ण सिंह एवं सुश्री वन्दना सिन्हा ने मनमोहक भजनों से कार्यक्रम की शुरूआत की। तदन्तर श्री मनोज शास्त्री, श्री दीपक मिश्रा, श्री संजय ठाकुर, श्री त्रिपुरारी मिश्रा ने अपने–अपने भजनों से श्रोताओं को आनन्द विभोर कर दिया।

उपसभा प्रधान डॉ. यू.एस. प्रसाद ने धन्यवाद ज्ञापन कर संगीत शिक्षकों का उत्साह वर्धन किया।

दिनांक 8 मई 2019 को सांयकालीन बेला में डॉ. डी.राम डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, गोला रोड़, दानापुर पटना के प्रांगण में भजन–संध्या का आयोजन हुआ। पूरा प्रांगण अभिभावकों से खचाखच भरा हुआ था।

अतिथियों तथा संगीत अध्यापकों के स्वागत उपरान्त दीप प्रज्ज्वलन के साथ भजन संध्या के कार्यक्रम का विधिवत् आरंभ किया गया। प्राचार्य ने स्वागत भाषण में अतिथियों एवं अभिभावकों को भजन–सन्ध्या का उद्देश्य समझाते हुए माता–पिता के बच्चों के प्रति कर्त्तव्यों का बोध कराया। श्री अरूण आर्य पूर्व प्राचार्य राजकीय उच्च विद्यालय आरा द्वारा भजन – 'चदरिया झीनी रे झीनी' श्रोताओं को आनन्द विभोर कर दिया। अन्त में शांतिपाठ एवं जयघोष हुआ और आगत सभी लोगों

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

डी.ए.वी सूरजपुर में मनाया गया 'मदर डे'

डी.ए.वी सूरजपुर में 'मदर डे' के अवसर पर हवन की आहुतियों एवं मन्त्रोच्चारण के बीच अभिभावकों का अभिवादन कर उन्हें सम्मानित किया गया। छात्रों ने इस अवसर पर अभिभावकों विशेषकर अपनी माँ के सम्मान में न केवल सुंदर कार्ड बनाए बल्कि माँ के सम्मान स्वरूप कविताएँ एवं मधुर संगीत की भी प्रस्तुति दी।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि के तौर पर श्रीमति सुदेश गंधार एवं श्रीमति डॉ. ममता गोयल की माता जी श्रीमति राजरानी विशेष तौर पर आमंत्रित थे जिन्होने समस्त अभिभावकों, छात्रों एवं शिक्षकों को अपना शुभाशीष देकर उनका उत्साह बढ़ाया। छात्रों एवं अभिभावाकों को अपना शुभ संदेश देते हुए अपने अभिभाषण में प्राचार्या डॉ. ममता गोयल ने कहा कि माँ मात्र एक शब्द नहीं बल्कि स्वयं में एक आदर्श एवं संदेश है जो मानव को सही मार्गदर्शन देने के साथ ही साथ कर्मपथ पर चलने के लिए अग्रसर करता है।

कक्षा बारहवीं के हर्षित ने माँ पर आधारित गीत 'कैसे बताउं मेरे लिए तुम कौन हो', कुमारी आनंदी कक्षा दसवीं ने गीता सार एवं यूकेजी कक्षा के छात्रों ने 'तू कितनी अच्छी है तू कितनी भोली है' गीत पर समूह नृत्य प्रस्तुत किया।

प्राचार्या के शुभ संदेश, भजन, प्रसाद वितरण एवं शांति पाठ के साथ समारोह सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. ७

संपादक – **पूनम सूरी**

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 26 मई 2019 से 01 जून 2019

हे सोम! हृदय–कलश में प्रवेश करो

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

पवस्य सोम देववीतये वृषा, इन्द्रस्य हार्दि सोमधानमाविश।
पुरा नो बाधाद् दुरितातिं पारय, क्षेत्रविद्धि दिश आहा विपृच्छते।।

ऋग् ९.७०.९

ऋषिः **रेणुः वैश्वामित्रः**। देवता **पवमानः सोमः**। छन्दः **जगती**।

● **(सोम)** हे सोम परमात्मन्! **(तू)**, **(वृषा)** वर्षक **(होता हुआ)**, **(देववीतये)** दिव्य गुणों की प्राप्ति के लिए, **(पवस्य)** प्रवाहित हो, **(इन्द्रस्य)** आत्मा के, **(हार्दि)** हृदय–रूप, **(सोमधानं)** सोम–कलश में, **(आविश)** प्रविष्ट हो।, **(बाधात्)** बाधे जाने से, **(पुरा)** पहले, **(नः)** हमें, **(दुरिता अति)** पापचरणों से लंघाकर, **(पारय)** पार करदे। **(क्षेत्रवित्)** मार्ग का ज्ञाता, **(विपृच्छते)** विशेषरूप से पूछनेवाले के लिए, **(दिशः)** दिशाओं को, **(आह हि)** बताता ही है।

● हे रसागर सोम परमात्मन्! तुम 'वृषा' हो, रस की वर्षा करनेवाले हो। तुम दिव्य गुणों के रस के साथ मेरे अन्दर प्रवाहित होवो। तुम आत्मा के हृदय–रूप सोम–कलश में आकर प्रविष्ट होवो। मेरा आत्मा न जाने कब से सोम–पान के लिए उत्कंठित हो रहा है, उस प्यासे की तृषा को दूर करो। तुम कामवर्षी हो, मेरी कामना को पूर्ण करो। तुम आनन्दवर्षी हो, मुझपर आनन्द की वर्षा करो।

कभी–कभी मेरा आत्मा 'दुरितों' से घिर जाता है। पाप–भावनाएँ उसे आगे बढ़ने से रोकती हैं। पाप–कर्म उसे निगलने के लिए तैयार रहते हैं। आसपास का पापमय वातावरण उसे पाप–मार्ग पर चलने के लिए प्रलोभित करता है। ऐसे समय में हे मेरे सोम प्रभु! क्या तुम खड़े देखते ही रहोगे? क्या तुम मुझे 'दुरितों' से ग्रसा जाने दोगे? क्या तुम मुझे पाप–ताप के प्रहारों से छलनी हो जाने दोगे? क्या तुम मुझे दुराचार–रूप शत्रुओं से आक्रान्त हो जाने दोगे? नहीं, तुम मेरे उद्धारक होकर आओ। इससे पहले कि 'दुरित' मेरे आत्मा पर प्रभुत्व पायें, उसे पतनोन्मुख करें, तुम त्वरित गति से मेरे पास आ जाओ और मुझे उन दुरितों से लंघाकर पार कर दो। संसार का यह नियम है कि जो 'क्षेत्रवित्' है, मार्ग का ज्ञाता है, वह पूछनेवाले को दिशा बताता ही है। तुमसे बढ़कर 'क्षेत्रवित्' बढ़कर मार्गज्ञ अन्य कौन है! अतः हे मेरे सोम प्रभु! मैं तो तुम्हीं से दिशा पूछता हूँ। मैं दिग्भ्रान्त हो रहा हूँ, तुम कुतुबनुमा यन्त्र की सुई बनकर मुझे दिशा दर्शाओ। यदि तुमसे दिशा–ज्ञान न मिला, तो मेरा जीवन–पोत भव–सागर में डूबकर नष्ट–भ्रष्ट हो जायेगा। हे प्रभु! मुझ भूले को सही राह दिखाओ, मुझ भटके को गन्तव्य लक्ष्य पर पहुँचाओ।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

त्यागमयी देवियाँ

● महात्मा आनन्द स्वामी

महात्मा आनन्द स्वामी ने देवी पार्वती पर कथा सुनाते हुए बताया कि 'पार्वती ने कहा, मेरे कोमल अंगों की चिन्ता न करो। मेरे नारी होने का भी विचार न करो। वेद भगवान् ने ऐसे समय ही के लिए आदेश दिया है कि – अवसृष्टा परा पत शरव्ये ब्रह्मसंशिते।
गच्छामित्रान्प्रपद्यस्व मामीषां कंचनोच्छिषः।। ऋ. 6।75।16।।

अर्थात् 'शस्त्रविशारद सशस्त्रा नारी! लपककर झपट जा और शत्रुओं पर टूट! उन शत्रुओं में से कोई भी शेष न रहे, बचकर जीवित न जाने पाये।'

मुझे इस समय वही प्रेरणा हो रही है। सुनो, मेरी भुजाओं में प्रभु–कृपा से वह बल है कि शत्रु इसे देखकर काँप उठेगा। मेरे पिता ने मुझे सारी युद्ध–विद्या सिखलाई थी। महात्मा शिव जी ने योग सिखलाकर उसे और भी सफल बना दिया है। मेरा तीर खाली नहीं जाता। तुम अपने मन में से मेरे स्त्री होने का विचार निकाल दो।

अब आगे ...

यह कहते हुए पार्वती की आँखों से प्रेम और प्रसन्नता के दो अश्रु माला के फूलों पर गिर पड़े, जो मोतियों की तरह चमकने लगे। देवी की इस आराधना और भक्ति को देखकर शत्रु सिपाही भी चकित हुए रो रहे थे। इतने में दो दूत वाटिका में आए और नमस्कार करके कहा, 'देवी! महाराज शुम्भ–निशुम्भ ने आपकी सेवा में हमें भेजा है। अपना परिचय दीजिये कि आप कौन हैं और किस उद्देश्य से आपका यहाँ आना हुआ है। महाराज शुम्भ आप जैसी सुन्दरी के दर्शन भी करना चाहते हैं। आप हमारे साथ उनके पास चलिये!'

पार्वती ने कहा, 'तुम्हारी सारी बातों के उत्तर मैं नहीं दूँगी। शिव का यह खड्ग देख लो और अपने महाराज से जाकर कह दो कि दर्शन करने की शक्ति रखते हो तो युद्धक्षेत्र में चलकर दर्शन कर लो।'

यह कड़ा उत्तर सुनकर शुम्भ के दूत क्रोधित हो गए और वहीं तलवार से तलवार खटकने लगी।

पार्वती ने कहा, 'अपना जीवन क्यों खोते हो? मेरा एक ही वार तुम्हें निष्प्राण कर देगा!' इसी क्षण पार्वती ने कमर से कृपाण निकाली और सचमुच एक ही वार में उनके शीश भूमि पर लुढ़कते दिखलाई दिये।

राक्षसों के दूसरे योद्धा आगे बढ़े तो उनकी भी यही अवस्था हुई। सहस्रों शूरवीर मृत्यु का ग्रास बन गए।

जब राक्षसराज शुम्भ के पास समाचार पहुँचा तो उसने अपनी सेना के सबसे बड़े योद्धाओं को पार्वती को पकड़कर लाने या वध कर देने के लिए भेजा। परन्तु उनको भी शीघ्र ही पार्वती ने यमलोक भेज दिया। यह देखकर राक्षस भागने लगे।

'राक्षसराज की दुहाई! वह स्त्री नहीं, वह तो साक्षात् मृत्यु है! उसके समक्ष कोई न जाना!'

राक्षस यही कहते भाग रहे थे तो आर्यावर्त के क्षत्रियों ने कहा 'भागते क्यों हो? अब ठहरो! भीरु न बनो!'

यह ललकार सुनकर वे फिर युद्ध में जुट गए और उनका वहीं अन्त हो गया।

'अब क्या करूँ?' शुम्भ विचार करने लगा। उसने अपना अन्तिम सेनापति रक्तबीज पार्वती से युद्ध करने के लिए भेजा। जब रक्तबीज युद्धस्थल में पहुँचा तो पार्वती ने कहा, 'ओह! तो तुझे भी यमपुरी जाने की लालसा यहाँ खींच लाई है।'

रक्तबीज पार्वती के मुख की शोभा देखकर चकित रह गया और उसके युद्ध करने के ढंग देखे तो कह उठा, 'बड़े से बड़े शूरवीर को भी ऐसी वीरता से लड़ते नहीं देखा।'

रक्तबीज बड़े ढंग से लड़ने लगा, ताकि पार्वती के वार से बचा रहे। परन्तु कब तक? पार्वती ने कहा, 'कायर क्यों बनते हो? आगे बढ़कर लड़ो।'

रक्तबीज ज़रा आगे बढ़ा। जैसे ही वह पार्वती के खड्ग के घेरे में आया तो उसका शीश भूमि पर लोटने लगा।

जब राक्षसराज को पता चला तो वह दुःखी होकर कह उठा, 'ओह! मेरा अन्तिम सेनापति भी मारा गया है, जिसे भूमि पर जीतने वाला कोई न था। अब क्या करूँ। क्या भाग चलूँ? मगर यह तो बहुत बुरा होगा। लड़ना ही चाहिए।' यह विचारकर राक्षसराज स्वयं पार्वती से युद्ध करने के लिए आगे बढ़ा।

इधर यह भयंकर युद्ध पार्वती लड़ रही थी, उधर कैलास पर्वत पर शिव जी महाराज की समाधि खुली तो शिष्यों ने बतलाया कि माता पार्वती राक्षसों को आर्यावर्त से निकालने के लिए युद्धस्थल में चली गई हैं। शिव जी महाराज ने कहा, 'देवी ने बहुत बड़ा उत्साह दिखलाया है, परन्तु मायावी राक्षसों से उसकी रक्षा करनी चाहिये।' यह कहकर शिव जी अपने शिष्यों सहित कैलास से चल पड़े और खोजते–खोजते उसी सुमन वाटिका

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

ऋषि दयानन्द प्रतिपादित राजधर्म

(प्राप्त अप्रकाशित रचनाओं में से)

● डॉ भवानीलाल भारतीय

अपने प्रमुख ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में ऋषि दयानन्द ने आदर्श मानव जीवन की एक आदर्श रूपरेखा प्रस्तुत की है। मनुष्य अपने जन्म से आरम्भ कर शिक्षा–दीक्षा, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा सन्यास आश्रम में रहकर किस प्रकार पूर्णायु प्राप्त करे, आदर्श जीवन की सारी प्रविधि बताकर लेखक ने कुछ अन्य विषयों का विवेचन भी किया है। इस प्रसंग में सर्वप्रथम 'राजधर्म' या राज्य प्रशासन को लेकर उन्होंने इस ग्रन्थ का छठा समुल्लास लिखा। ऋषि दयानन्द राजनीति की अपेक्षा राजधर्म ('राजधर्न' शब्द का प्रयोग मनु ने किया है। वे लिखते है – राजधर्मान् प्रवक्ष्यामि यथावृत्तो भवेन्नृपः। सम्भवश्च यथा तस्य सिद्धिश्च परमा यथा।।7।1) शब्द के प्रयोग को प्रशस्त मानते हैं, अतः उन्होंने इस अध्याय को निम्न शीर्षक दिया।

अर्थ राजधर्मान् व्याख्यास्यामः

इस अध्याय को लिखने में दयानन्द ने प्रमुखतः मनुस्मृति को आधार बनाया है। राजनीति या राजधर्म की विवेचनाएँ तो संस्कृत के अन्य शास्त्रीय ग्रन्थों में भी मिलती है, (पं. भगवद्दत के अनुसार संस्कृत वाङ्मय में जो राजनीति प्रधान ग्रन्थ लिखे गए उनमें प्रमुख ग्रन्थों के रचयिता आचार्य ये थे– औशनस, कात्यायन, कौणापदन्त (भीष्म), जामदग्न्य, पिशुन (नारद), बार्हस्पत्य, बाहुदन्ती, बृहस्पति, मनु, व्यात व्याधि (उद्धव) विदुर, विशालाक्ष, शुक्र, कामन्दक आदि।) किन्तु मनु ने इस विषय का विशद और गम्भीर विवेचन किया है। दयानन्द ने देश के सर्वोच्च शासक को 'राजा' के नाम से पुकारा है, किन्तु 'राजा' से उनका अभिप्राय पुश्तैनी वंश–परम्परा से राज्याधिकार प्राप्त करने वाले राजा से नहीं है, यद्यपि प्राचीन भारत में वंशगत तथा परम्परागत ऐसी शासन–प्रणाली शताब्दियों तक चलती रही। दयानन्द के विचारों से राजा को निर्वाचित होना चाहिए और उसे राज्य सञ्चालन में निर्वाचित सभा (संसद तथा मन्त्रिमण्डल) से निर्देश लेना चाहिए। इस प्रसंग में वे लिखते हैं– ''एक को स्वतन्त्र राज्य का अधिकार नहीं देना चाहिए, किन्तु राजा तो सभापति (सभापति राजा का दूसरा नाम है इसे राष्ट्राध्यक्ष भी कहा जा सकता है) तदधीन सभा, सभाधीन राजा और सभा प्रजा के अधीन और प्रजा राजसभा के अधीन रहे'' (सत्यार्थप्रकाशः छठा समुल्लास।) इस पंक्ति के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सर्वप्रथम प्रजा द्वारा एक सभा (संसद) का निर्वाचन किया जाना चाहिए। तब वह सभा (संसद) राजा (राष्ट्रपति या राष्ट्राध्यक्ष) का निर्वाचन करे। राजा पर सभा का पूर्ण नियन्त्रण रहे और सभा अपने द्वारा निर्वाचित सुयोग्य राजा का मार्गदर्शन प्राप्त कर राज्य का सञ्चालन करे। इस प्रकार राजा, सभा, प्रजा से तीनों परस्पर एक दूसरे का नियन्त्रण करते रहें ताकि किसी स्तर पर अन्याय तथा स्वेच्छाचारिता न हो सके।

सत्यार्थप्रकाश के षष्ठ समुल्लास के अवशिष्ट भाग में दयानन्द ने राजनीति, प्रशासन, परराष्ट्र नीति, युद्ध आदि विभिन्न विषयों पर मनुस्मृति को उद्धृत कर अपने विचार रखे हैं। उन्होंने इस बात पर जोर दिया है कि शासनाध्यक्ष राजा, उसके सेनापति तथा सभासदों को जितेन्द्रिय तथा दस कामज (दस कामज दुर्गुण हैं – मृगया (शिकार) अक्ष क्रीड़ा (जुआ खेलना), दिन में सोना, काम कथा या परनिन्दा, स्त्रियों का अतिसंग, मादक पदार्थ सेवन, नृत्य गीतादि विलासोद्दीपक मनोरंजन, व्यर्थ में इधर–उधर भटकना।) एवम् आठ क्रोधज (आठ क्रोधज दुर्गुण हैं – पैशुन्य (चुगली साहस (परनारी से बलात्कार), द्रोह, ईर्ष्या, असूया (गुणों में दोषों का तथा दोषों में गुणों का आरोपण) अर्थदूषण (रिश्वत लेना या बुरे कामों में धन का व्यय) कठोर बोलना तथा पारुष्य (निरपराध को दण्ड देना)) दुर्गुणों से रहित होना चाहिए। मन्त्रियों के गुणों और उनकी योग्यता को निर्धारित करने के पश्चात् वे अन्य देशों में भेजे जाने वाले दूतों, सन्धि–विग्रहिक (परराष्ट्र मन्त्री) राजपुरोहित, गुप्तचर, राज्य कर्मचारी, राजस्व विभाग के कार्यकर्त्ता आदि के कर्त्तव्यों का विवेचन करते हैं। राजस्व अधिकारी प्रजा से करों को इस प्रकार वसूल करें जिससे कि लोगों पर अधिक आर्थिक भार न पड़े। राज्य की आन्तरिक स्थिति तथा पड़ोसी देशों में कौन शत्रु या मित्र हैं, यह सब जानने के लिए चतुर गुप्तचरों की आवश्यकता रहती है। गुप्तचरों की सहायता से राजा सर्वत्र सारी जानकारियाँ प्राप्त करता रहे। साम, दाम, भेद जैसे उपायों का प्रयोग कर मित्रजन, शत्रुओं तथा तटस्थों के प्रति उसे अपनी नीति बनानी चाहिए। विभिन्न राज्यों में परस्पर युद्ध की परिस्थितियाँ सामान्य स्थिति से भिन्न होती हैं। युद्ध के समय के राजा के कर्तव्य सामान्य कर्तव्यों से भिन्न होते हैं। युद्ध में जय या पराजय प्राप्त होने पर शासक का कैसा व्यवहार हो, यह विस्तार से यहाँ निरूपित किया गया है। युद्ध कौशल पर संस्कृत में **'समरांगणसूत्रधार'** जैसे ग्रन्थ मिलते हैं। दयानन्द ने युद्ध काल में नाना व्यूहों की रचना का उल्लेख किया है। मनु ने शकट, वराह, मकर, सूची, वज्र, सर्प तथा पद्म के भेद से सात प्रकार की व्यूह रचना मानी है। सेना प्रस्थान के लिए भूमि, जल तथा आकाश, इन तीन मार्गों की व्यवस्था बताई गई है।

राजा दण्डाधिकारी तथा न्यायाधीश, दोनों के कार्यों का वहन करता है। (आज के व्यवहार में इसे मैजिस्ट्रेट तथा जज के कर्त्तव्य कहेंगे।) इसलिए अपराधियों के प्रति किस प्रकार की दण्ड व्यवस्था रहे, यह मनुस्मृति में विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। इसी प्रकार प्रजा के बीच उत्पन्न विभिन्न वाद–विवादों का न्यायपूर्वक विचार तथा निस्तारण राजा का प्रमुख कर्त्तव्य है। न्याय के निर्वहन में साक्षियों की प्रधान भूमिका रहती है, क्योंकि साक्षी लोग कृत अपराध की जानकारी रखते हैं तथा वे न्यायधीश को सही तथ्यों तक पहुँचने में सहायता देते हैं। भारत की आचार–मीमांसा सत्य को सर्वोपरि महत्त्व देती है। मनु ने साक्षी के प्रसंग में लिखा है–

सत्येन पूज्यते साक्षी धर्मः सत्येन वर्धते।
तस्मात् सत्यं हि वक्तव्यं सर्ववर्णेषु साक्षिभिः।8।83

अर्थात् सत्य बोलने से साक्षी पवित्र होता है, सत्य से धर्म की वृद्धि होती है, इस कारण सब कार्यों में साक्षियों को सत्य ही बोलना चाहिए। दण्ड देते समय राजा (न्यायाधीश) को अत्यन्त सावधानी बरतनी चाहिए। जो राजा दण्डनीय को दण्ड न दे अर्थात् अपराधी को छोड़ दे तथा अदण्डनीय को दण्डित करे ते वह निन्दा का पात्र होता है तथा मरणोपरान्त नरक प्राप्त करता है। मनु की राय में दण्ड चार प्रकार का होता है– वाणी से ताड़ना, धिक् दण्ड– अपराधी को धिकृत करना, अर्थदण्ड – जुर्माना करना तथा अन्तिम वध दण्ड, जो किसी हत्यारे को दिया जाता है। व्यभिचारी पुरुष तथा स्त्री के लिए अतीव कठोर दण्ड की व्यवस्था की गई है।

ऋषि दयानन्द ने राजधर्म तथा राज्य प्रशासन की जो रूपरेखा यहाँ प्रस्तुत की है वह अन्तिम या अलंघनीय है, ऐसी बात नहीं है। देश, काल तथा परिशिति के अनुसार इसमें यथेष्ठ परिवर्तन किया जा सकता है। ऋषि दयानन्द ने उदयपुर के महाराणा सज्जनसिंह तथा शाहपुराधीश राजधिराज नाहरसिंह को मनुस्मृति के इन्हीं राजधर्म परक अध्यायों को विस्तार से समझाया था तथा उन्हें निर्देश दिया था कि प्रजा के हित को वे सर्वोपरि समझें तथा निष्पक्ष भाव से प्रजापालन को अपना सर्वोपरि कर्त्तव्य मानें। राजाओं को उनका प्रजापालन रूपी धर्म सिखलाने के लिए स्वामीजी ने समय – समय पर अपने इन शिष्य नरेशों को विस्तृत पत्र लिखकर कर्त्तव्य बोध भी कराया। महाराणा सज्जनसिंह ने एक ऐसे ही प्रबोधन देनेवाले पत्र को पाकर उत्तर में स्वामीजी को लिखा –

'समयानुसार शिक्षा जो आपने लिखी सो हमारे लिए उपकारिणी हुई। प्रथम से ही इस प्रकार का ध्यान था, अब भी वैसा ही रहेगा, किन्तु अधिक।' शाहपुरा नरेश ने एक पत्र में स्वामीजी को सूचित किया कि वे अपने राज्य में क्षत्रिय पाठशाला स्थापित करना चाहते हैं। जोधपुर के शासक महाराज जसवन्तसिंह तथा उनके अनुज महाराज प्रतापसिंह को भी स्वामीजीने राजधर्म की प्रेरणा देनेवाले उद्बोधक पत्र लिखे थे।' (विस्तार के लिए देखें – ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र–व्यवहार का विश्लेषणात्मक अध्ययन (राजधर्म और प्रशासन विषयक मार्गर्शन (नवाँ अध्याय) तथा ग्रन्थ के उत्तरार्द्ध में 'राजा–महाराजाओं तथा सामन्तों के पत्र'। डॉ. भवानीलाल भारतीय दयानन्द संस्थान जोधपुर ये 2002 में प्रकाशित)

छठे समुल्लास की समाप्ति पर स्वामीजी लिखते हैं कि संस्कृत में राजधर्म के विधायक मनुस्मृति (अ.,7,8,9) से भिन्न अन्य ग्रन्थ भी हैं। वे यहाँ शुक्रनीति, महाभारतान्तर्गत विदुर–प्रजागर तथा शान्तिपर्व का उल्लेख करते हैं। राजधर्म–प्रकरण को विराम देते हुए ऋषि दयानन्द एक महत्त्वपूर्ण संकेत यह देते हैं कि किसी देश या राज्य का लौकिक शासक तो मरणधर्मा राजा होता है किन्तु **समस्त सृष्टि का शासक प्रजापति परमेश्वर है, अतः प्रत्येक मनुष्य को समझना चाहिए– ''वयं प्रजापतेः प्रजा अभूम।** हम प्रजापति अर्थात् परमेश्वर की प्रजा और परमात्मा हमारा राजा, हम उसके किंकर भृत्यवत् हैं।'' संकेत रूप में दयानन्द कहना चाहते हैं। कि सांसारिक राजा की अपनी सीमाएँ होती हैं। वह न्याय करता है तो कभी–कभी अन्यायाचरण भी कर बैठता है। वस्तुतः निखिल ब्रह्मण्ड का सर्वोपरि शासक परमात्मा ही है, जिसकी न्याय–व्यवस्था में कोई व्यतिक्रम नहीं होता। अतः उस परमात्मा से हमारी विनय होनी चाहिए कि उसके कृपाकटाक्ष से हम सही अर्थ में राज्याधिकारी बनें तथा वह हमें सत्य और न्याय के आचरण में प्रवृत्त करें। इस प्रकार उन्होंने आस्तिकता को राजा (शासक) का प्रमुख गुण ठहराया है।)

ऋषि दयानन्द के लिए राजधर्म का प्रतिपादन कितना आवश्यक तथा सामयिक था, यह इस तथ्य से विदित होता है कि उन्होंने अपने सिद्धान्त प्रतिपादक प्रमुख ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश से भिन्न ग्रंथो से भी प्रसंग के आग्रह से इस विषय की चर्चा की है। उदाहरणार्थ, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, यद्यपि वेद–विषयक जानकारी देनेवाला ग्रन्थ है, तथापि उसमें अथ राजप्रजाधर्मविषयः संक्षेपतः' शीर्षक से वेद–मन्त्रों के प्रमाण देकर अभीष्ट विषय की साङ्गोपाङ्ग विवेचना की गई है। इस प्रकरण के आरम्भ में **'त्रीणि राजाना विदथे पुरूणि।'** (ऋ. 3।86।6) तथा यजुर्वेद के **'क्षत्रियस्य योनिरसि।'** (2।1) और **'यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च।'** (20।25) मन्त्र देकर राजा द्वारा गठित राजार्यसभा, विद्यार्यसभा तथा धर्मार्यसभा के कर्त्तव्यों को निर्धारित किया है। यजुर्वेद के अन्य राजधर्म विषयक मन्त्र भी यहाँ विवेचित हुए हैं। **'इमं देवा असपत्नं सुवध्वं महते क्षत्राय।'** (यजु. 9।4) को उद्धृत कर उस वेदवित्, सौम्यगुण सम्पन्न सकल विद्यायुक्त व्यक्ति को सभाध्यक्ष या राजा निर्वाचित

☞ पृष्ठ 09 का शेष

इन्द्र व उसका सोमपान

● महात्मा चैतन्यस्वामी

इन्द्र के सम्बन्ध में जन–साधारण में अनेक प्रकार की काल्पिनिक, निराधार, अवैज्ञानिक एवं हास्यास्पद कथाएँ प्रचलित हैं। भागवत पुराण के छठे स्कन्ध के सातवें अध्याय में इस सम्बन्ध में लिखा है कि – 'इन्द्र को त्रिलोकी का ऐश्वर्य पाकर अभिमान हो गया, जिसके कारण वह धर्म मर्यादा एवं सदाचार का उल्लंघन करने लगा। एक समय की बात है, वह भरी सभा में अपनी पत्नी शची के साथ अपने ऊँचें सिहांसन पर बैठा हुआ था और उनके पास मरूतगण, आठ वसु, ग्यारह रूद्र, आदित्य, ऋषिगण, विश्वदेवा, साध्यगण और दोनों अश्विनि कुमार उनकी सेवा में उपस्थित थे। सिद्ध, चारण, गन्धर्व, ब्रम्हवादी मुनिगण, विद्याधर अप्सराएँ, किन्नर परियाँ और नाग उसकी सेवा और स्तुति कर रहे थे... सब ओर ललित स्वर में देवराज इन्द्र की कीर्ति का गान हो रहा था। ऊपर की ओर चन्द्रमण्डल के समान सुन्दर श्वेत छत्र शोभायमान था। चंवर एवं पंखे आदि महाराजोचित सामग्रियाँ यथा स्थान सुसज्जित हो सुशोभित हो रहे थे... 'इस प्रकार पुराणों में इन्द्र को देवताओं का राजा माना गया है, जो सोने का मुकुट पहनता है, उसके हाथ में बज्र रहता है, वह ऐरावत नामक श्वेत हाथी की सवारी करता है, मेनका व रंभा आदि अप्सराएँ उसके दरवार में नृत्य करती हैं, वह साधनारत ऋषि–मुनियों की तपस्या भंग करने के लिए अप्सराओं को भेजता है क्योंकि उसे सदा यह डर बना रहता है कि कोई ऋषि मेरे पद को प्राप्त न कर सके। वह स्वयं गौतम ऋषि की पत्नी अहिल्या का चरित्रभ्रष्ट करने के लिए गया था... पुराणों का इन्द्र युद्ध भी करता है, उसने दधीचि की हड्डियों से शस्त्र बनाकर वृत्रासुर का बध किया था... ब्रम्हवैवर्त्त पुराण में लिखा है कि इन्द्र देवों का राजा था, जिसने गौतम ऋषि की पत्नी अहिल्या के साथ जार कर्म किया, गौतम ऋषि ने उसे शाप दिया कि तू सहस्त्र भग वाला हो जा, अहिल्या को शाप दिया कि तू पत्थर हो जा, श्रीरामजी की पादरज से वह शापमुक्त होकर पुनः स्त्री बनी थी। एक अन्य कथा पुराणों में इस प्रकार है कि त्वष्टा के पुत्र वृत्रासुर ने देवों के राजा इन्द्र को निगल लिया जिससे देवता भयभीत होकर विष्णु के पास गए, विष्णु ने उसके मारने का उपाय यह बताया कि समुद्र के झाग को उठाकर उस पर मारना उससे वह मर जाएेगा। इसी प्रकार देवासुर संग्राम की कथा भी है। वृत्रासुर दैत्यों का राजा था, जिसके साथ बहुत बड़ी दैत्यों की सेना थी तथा उसका पुरोहित शुक्राचार्य था। इसी प्रकार देवताओं का राजा इन्द्र था तथा उसके पास भी सेना थी और उसका पुरोहित वृहस्पति था... राक्षसों को मारने के लिए दधीचि ऋषिजी ने अपनी हड्डियाँ प्रदान की जिनके शस्त्र से इन्द्र ने वृत्रासुर का बध किया.....

वास्तविकता यह है कि इन्द्र के नाम पर पौराणिक काल में इस प्रकार की कल्पनाएँ इसलिए गढ़ ली गई क्योंकि वेद में आए इन्द्र, वृत्र, गौतम, अहिल्या, दीधचि, अप्सरा, रंभा, उर्वशी आदि शब्दों को सही–सही परिप्रेक्ष्य में नहीं समझा गया क्योंकि सायण एवं महिधर आदि तथा पाश्चात्य विद्वानों ने वेद मन्त्रों के अध्यात्म, अधिदैवत और अधियज्ञ आदि अर्थ करने की परम्परा का निर्वहन नहीं किया। पुराण साहित्य तो वैसे भी अनेक प्रकार की अविश्नीय, अनर्गल, काल्पनिक, सृष्टिनियम के विरूद्ध बातों तथा हमारी गरिमामयी प्राचीनतम वैदिक–संस्कृति की ज्ञान–गरिमा रूपी विरासत को नीचा दिखाने की बातों से भरा पड़ा है। संभवतः हमारी गरिमापूर्ण संस्कृति एवं समुज्ज्वल इतिहास को पूर्णरूप से अविश्वसनीय, अवैज्ञानिक, अश्लील और हेय दिखाने के लिए इस प्रकार के साहित्य की रचना विधिवत् करवाई गई होगी और इसका कुपरिणाम भी हम आज देख रहे हैं। इस प्रकार के निराधार ग्रन्थों को विश्वसनीयता की श्रेणी में लाने के लिए इनके रचायिता के रूप में महर्षि वेदव्यासजी का नाम लिया जाता है मगर महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का अभिमत है कि – 'जो अठारह पुराणों के कर्त्ता व्यासजी होते, तो उनमें इतने गपोड़े न होते। क्योंकि शारीरिक सूत्र, योगशास्त्र के भाष्यादि व्यासोक्त ग्रन्थों के देखने से विदित होता है कि व्यासजी बड़े विद्वान् सत्यवादी धार्मिक योगी थे। वे ऐसी मिथ्या कथा कभी न लिखते और इससे यह सिद्ध होता है कि जिन सम्प्रदायी परस्पर विरोधी लोगों ने भागवतादि नवीन कपोलकल्पित ग्रन्थ बनाए हैं, उनमें व्यासजी के गुणों का लेश भी नहीं था और वेदशास्त्रविरूद्ध असत्यवाद लिखना व्यास सदृश विद्वानों का काम नहीं। किन्तु यह काम (वेद–शास्त्र) विरोधी स्वार्थी अविद्वान् लोगों का है।' अपने ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' में महर्षि दयानन्दजी ने प्रमाण भी दिया है कि–'यह भागवत बोबदेव का बनाया है, जिसके भाई जयदेव ने 'गीतगोविन्द' बनाया है। देखो उसने यह श्लोक अपने बनाए 'हिमाद्रि' नामक ग्रन्थ में लिखे हैं कि 'श्रीमद्भागवतपुराण मैंने बनाया है।' उस लेख के तीन पत्र हमारे पास थे। उनमें से एक पत्र खो गया है। उस पत्र में श्लोकों का जो आशय था, उस आशय के हमने दो श्लोक बनाके नीचे लिखे हैं। जिसको देखना हो, वह 'हिमाद्रि' ग्रन्थ में देख लेवें–

'हिमादेः सचिवस्यार्थे सूचना
क्रियतेऽधुना।
स्कन्धाऽध्यायकथानां च यत्प्रमाणं
समासतः।।
श्रीमद्भागवतं नाम पुराणं च
मयेरितम्।
विदुषा बोबदेवेन श्रीकृष्णस्य
यशोन्वितम्।।'

इसी प्रकार के नष्टपत्र में श्लोक थे। अर्थात् राजा के सचिव हिमाद्रि ने 'बोबदेव' पण्डित से कहा कि– 'मुझको तुम्हारे बनाये श्रीमद्भागवत के सम्पूर्ण सुनने का अवकाश नहीं है। इसलिए तुम संक्षेप से श्लोकबद्ध सूचीपत्र बनाओ। जिसको देखके मैं श्रीमद्भागवत की कथा को संक्षेप से जान लूँ। सो नीचे लिखा हुआ सूचीपत्र उस 'बोबदेव' ने बनाया। उन में से उस नष्ट पत्र में 10 श्लोक खो गए हैं। ग्यारहवें श्लोक से लिखते हैं। ये नीचे लिखे श्लोक सब बोबदेव ने बनाये हैं। वे–

बोधयन्तीति हि प्राहुः.....प्रोक्ता द्रौणिजयादयः।। (इति प्रथम स्कन्धः) इत्यादि बारह स्कन्धों का सूचीपत्र इसी प्रकार 'बोबदेव' पण्डित ने बनाकर 'हिमाद्रि' सचिव को दिया। जो विस्तार देखना चाहे, वह बोबदेव के बनाये हिमाद्रि ग्रन्थ में देख लेवें। इसी प्रकार अन्य पुराणों की लीला समझनी। परन्तु उन्नीस, बीस, इक्कीस एक दूसरे से बढ़कर हैं... 'पण्डित युधिष्ठिर मीमांसक जी अपनी टिप्पणी में लिखते है –'द्र.–नीलकण्ठ कृत देवीभागवत की टीका का उपोद्घात–**'विष्णु–भागवतं बोपदेवकृतमिति वदन्ति।'** शाहजहां के समकालिक कवीन्द्राचार्य के पुस्तकालय के सूचीपत्र (बड़ोदा से छपा) में भागवत को बोपदेवकृत निरूपम'

इन्द्र के सम्बन्ध में विशद् चर्चा हम आगे करने का प्रयास करेंगे मगर यहाँ पर केवल इन पौराणिक कथाओं के वैदिक स्वरूप पर थोड़ा सा विचार कर लेते हैं। वेद में इन्द्र सूर्य का भी नाम है तथा वृत्र बादलों का नाम है। ऋग्वेद के एक मन्त्र (1–32–10) पर विचार करते हुए यास्क लिखते हैं – **तत्रको वृत्रो मेघ इति नैरूक्ता अपां च ज्योतिषश्च मिश्रीभाव कर्मणा वर्ष कर्म जायते।** अर्थात् वृत्र नाम मेघ का है। सूर्य की किरणों तथा बादल के जल के मेल से वर्षा होती है। **ऋषेर्दृष्टार्थस्य प्रीतिर्भवत्याख्यान संयुक्ता।** ऋषि अर्थ को समझने के लिए आलंकारिक आख्यानों का सहारा लेते हैं। वेद में इन्द्र सम्बन्धी आलंकारिक वर्णनों को अपनी अज्ञता के कारण पुराणों में काल्पनिक और विकृत रूप में प्रस्तुत किया गया है। पाश्चात्य विद्वानों तथा आगे आने वाले संस्कृत के कवियों ने भी इसी दूषित पद्धति का निर्वहन करते हुए न केवल अर्थ का अनर्थ किया बल्कि वेद में इतिहास आदि भी सिद्ध करने का कुत्सित प्रयास किया है। उपरोक्त वेद मन्त्र में इन्द्र सूर्य को कहा गया है जो सभी नक्षत्रों का राजा है, इसलिए इसे देवराज इन्द्र कहा गया है। सूर्य रूपी इन्द्र स्वर्गलोग अर्थात् द्युलोक में रहता है। इसकी किरणें ही बज्र है। यह सूर्य बादलों से ऊपर रहता है तथा ये बादल ही उसका ऐरावत नामक हाथी है। सूर्य की किरणें अपसरण अर्थात् गति करने के कारण अप्सराएँ कहलाती हैं, जो नृत्य करती हुई दिखाई देती हैं। **'अप्सु सरन्ति ताः अप्सराः'** जल में प्रविष्ट होती हैं इसलिए किरणें अप्सराएँ हैं। लहरों के साथ किरणें भी नृत्य करती हैं यही इनका नाचना है। इस सूर्य अर्थात् इन्द्र का युद्ध बादलों अर्थात् वृत्र से होता है। इन्द्र अपने किरणों रूपी बज्र से वृत्रासुर को मारते हैं जिससे वर्षा होती है और बादल मर जाते हैं। सूर्य की किरणों का नाम रंभा, उर्वशी आदि भी है। जब अन्तरिक्ष में सूर्य की किरणें फैलती हैं तब सातों ऋषियों का (सात तारों का) तप समाप्त हो जाता है अर्थात् वे निस्तेज हो जाते हैं, यही अप्सराओं (किरणों) के द्वारा ऋषियों का तप भंग करना कहा गया है...

ऋग्वेद के मन्त्र (1–84–13) का भाष्य करते हुए स्कन्द स्वामी ने एक कथा गढ़ ली कि देवताओं ने एक बार ब्रम्हा से कालकंज नाम के असुर को मारने का उपाय पूछा तो ब्रह्मा ने उन्हें दध्यङ् ऋषि के पास उपाय जानने के लिए भेजा। देवता उनके पास गए तो ऋषि ने उनके भाव को जानकर अपने प्राण त्याग दिए। उसकी हड्डियों से इन्द्र ने उस असुर का वध किया.... कालान्तर में यही कथा दधीचि ऋषि के नाम से प्रचलित हो गई कि दधीचि की हड्डियों के बज्र से इन्द्र ने वृत्रासुर का वध किया। यह कथा इसलिए गढ़ ली गई क्योंकि वेद मन्त्र में आए शब्दों के आलंकारिक वर्णन को सही–सही परिप्रेक्ष्य में नहीं समझा गया। **मन्त्र में आए इन्द्र, दधीचि, अस्थभिः तथा वृत्र को लेकर एक बहुत ही रोचक कथा कल्पित कर ली जबकि मन्त्र का सीधा सा अर्थ है–** (**अप्रतिष्कुतः**) स्थिर (**इन्द्रः**) इन्द्र ने (**दधीचः**) अपनी तेजरूप की (**अस्थभिः**) अस्थिर किरणों से (**वृत्राणि**) बादलों को (**नवतीर्नव**) निन्यानवे बार (**जघान**) मारा। भावार्थ रूप में इसे हम इस प्रकार समझ सकते हैं कि सूर्य अपनी धुरी पर स्थित है। सूर्य की किरणों की उष्मा से बादल बरसते हैं। यह प्रक्रिया वर्षा के महीनों में अर्थात् आषाढ़, श्रावण और भादों में चलती रहती हैं। बार–बार बादल उठते रहते हैं और बार–बार सूर्य उन्हें समाप्त करके वर्षा करता है। मन्त्र का आध्यात्मिक अर्थ इस प्रकार है – (**इन्द्रः**) जितेन्द्रिय पुरूष (**अप्रतिष्कुतः**) प्रतिकूल शब्द से रहित हुआ–हुआ, प्रतिद्वन्द्वी से रहित हुआ–हुआ (**दधीचः**) ध्यानी पुरूष की– (ध्यानं प्रत्यक्तः। निरू012–33) (**अस्थभिः**) (असु क्षेपणे) विषयों को दूर फैंकने की शक्तियों से (**वृत्राणि**) ज्ञान की आवरणभूत वासनाओं को (**नवतीः नव**) निन्यावे बार (**जघान**) नष्ट करता है और इस प्रकार शतवर्षी को वासना–शून्य बनाता है। मन्त्रार्थ का भाव स्पष्ट है कि ध्यान–परायण व्यक्ति ही दध्यङ् व दधीचि है। विषयों को दूर फेंकने की वृत्तियाँ ही हड्डियाँ हैं। वासना ही वृत्र है। निन्यानवे बार नाश का अभिप्राय यही है कि हम सदा वासना के आक्रमण को अपने से दूर रखने के लिए सजग रहते हैं।

इसी प्रकार इन्द्र द्वारा गौतम ऋषि की पत्नी अहिल्या से व्यभिचार करना, गौतम जी का इन्द्र को तथा अहिल्या को शाप देना, श्रीराम जी के चरण स्पर्श से अहिल्या का उद्धार होना आदि भी कथा कल्पित कर ली गई है जबकि वास्तविकता यह है कि– **गच्छतीति गोः अतिशयेन गच्छतीति गौतमः चन्द्रः** अर्थात् जो शीघ्र चलता है उस चन्द्र का नाम गौतम है। **अहर्दिनं**

शेष पृष्ठ 07 पर ☞

धर्म का स्वरूप

● भद्रसेन

जब कि धर्म का सीधा सा रूप है – धृति, क्षमा, दया, सच्चाई आदि अर्थात् इन बातों को व्यवहार में लाना। जब कोई व्यक्ति ईमानदार, संयमी, स्नेही, परोपकारी बनता है, तो उसका और समाज का जीवन सुखी व सरल होता है।

इस की पुष्टि धर्मशाला, धर्मकण्डा जैसे शब्दों से भी होती है। धर्मशाला – जैसे कि हम आपस के बोलचाल में जब धर्मशाला शब्द बोलते हैं, तो उसको सुनते ही सब की यही भावना होती है, कि ऐसा भवन, स्थान जहाँ बिना किसी प्रकार के भेदभाव, पक्षपात के सबको रहने, बर्तने का अवसर दिया जाता है, जिससे वह अपनी आवश्यकता सरलता से पूर्ण कर सके। तब वह इसमें अपनी भलाई, अपना लाभ, हित मानता है। अतः वह अवसर, सुविधा किसी का उपकार, किसी का सहयोग, किसी पर दया का कारण बनती है। किसी प्रकार की दया करना धर्म ही है। ऐसी दृष्टि से ही यह कहा जाता है – 'जहाँ दया तहाँ धर्म है' 'दया धर्म का मूल है।'

धर्मकण्डा – ऐसे ही धर्मकण्डा कहने पर सबके ध्यान में ऐसा साधन सामने आता है। जो (सोने आदि वस्तु का) माप–तोल करता है। सोने की जाँच–परख करके शुद्धता बताता है। अर्थात् ऐसा साधन जो जैसा है, उसकी सच्चाई, शुद्धता का निर्णय, न्याय करने वाला यन्त्र। अर्थात् न्याय, निर्णय निश्चय करना। इन दोनों शब्दों से भी यही सिद्ध होता है कि धर्म शब्द का भाव है – ऐसा व्यवहार, कार्य जो पक्षपात रहित (अर्थात् जो सबके लिए एक सा) जहाँ हो, वहाँ वह न्यायपूर्ण और सच्चाई से भरा हुआ हो। धर्मशब्द को स्पष्ट करते हुए महर्षि दयानन्द ने लिखा है – 'जो पक्षपात रहित न्याय सत्य का ग्रहण असत्य का सर्वथा परित्याग रूप आचार है, उसी का नाम धर्म और इससे विपरीत जो पक्षपात सहित अन्यायाचरण सत्य का त्याग और असत्य को ग्रहण रूप कर्म है उसी को अधर्म कहते हैं।'

सत्यार्थ 3, 52

'धर्म तो पक्षपात रहित न्यायाचरण, सत्य का ग्रहण, असत्य का परित्याग, वेदोक्त ईश्वर की आज्ञा का पालन, परोपकार, सत्यभाषणादि लक्षण सब आश्रमियों अर्थात् सब मनुष्यमात्र का एक ही है।'

सत्यार्थ समु. 5, पृ. 16

अनेकत्र धर्म को सदाचार शब्द से स्मरण किया है। जिसका अर्थ है – सत् = अच्छा, आचार = व्यवहार, वर्ताव, अच्छाई वाली बात। संसार में प्रत्येक अपने साथ दूसरों से अच्छाई, अच्छे व्यवहार की चाहना करता है।

आज बिना भेदभाव के सबका भला करने वाले धर्म को हमने अपने–अपने वर्ग का नाम दे दिया है। अतः धर्म शब्द से केवल और केवल हिन्दूधर्म, ईसाई धर्म, मुसलिम धर्म जैसों को लेना शुरू कर दिया है। फिर इनको एक–दूसरे से अलग सिद्ध करने के लिए अपनी–अपनी निशानियों की कल्पना करके धारण करने और धार्मिक कर्मकाण्ड के रूप में पूजा–पाठ करने की होड़ सी लगी रहती है। तब इसी से ही उस–उस धर्मवाला मानना, कहना आरम्भ कर दिया जाता है। अन्यथा उसे धर्मवाला नहीं माना जाता। अर्थात् धार्मिक कर्मकाण्ड ही आज के इन धर्मों की मुख्य बात, पहचान हो गई है।

धार्मिक कर्मकाण्ड – धार्मिक का अर्थ है – धर्मशास्त्र में बताया गया, धर्म से जुड़ा हुआ। कर्म = जो किया जाए जो करने में आए। अतः धार्मिक कर्म शब्द से इनमें धर्मग्रन्थ का पाठ, इष्टदेव की पूजा, तीर्थ, व्रत, जप, तप, ध्यान, स्मरण और विशेष तरह की निशानियों आदि धारण को लिया जाता है। जैसे कि अपने धर्मशास्त्र का एक विशेष ढंग से निर्धारित समय पर पाठ करना, पढ़ना। पूजा–अपने धर्मशास्त्र के अनुसार माने गए मान्य इष्ट देवी या वस्तु विशेष, की ही विशेष रूप से निर्दिष्ट शब्दों द्वारा विशेष प्रकार की बताई गई वस्तुओं (जैसे कि धूप–दीप–फल आदि) से पूजा–आरती करना, मत्था टेकना, भेंट चढ़ाना। तीर्थ–विशेष रूप से मान्यता प्राप्त स्थान पर निश्चित समय स्नान करना अर्थात् तीर्थयात्रा पर जाना। विशेष अवसर पर विधिपूर्वक व्रत–उपवास करना। इसमें अन्न का त्याग और नियत वस्तु का ही सेवन होता है। विशेष शब्द का जप (बार–बार धीरे बोलना) चिन्तन करना। प्रतीक–चिहन–निशानी = जैसे कि यज्ञोपवीत, शिखा, ककार (केश–कंघा, कच्छा, कटार आदि) वस्त्र विशेष, अभिमन्त्रित यन्त्र–कवच–ताबीज–अंगूठी आदि और विशेष वस्तु की माला धारण करना।

ऐसे–ऐसे किए जाने वाले अनेक प्रकार के कार्य, व्यवहार को धार्मिक कर्मकाण्ड कहा जाता है। सभी धर्म वाले अपने–अपने कर्मकाण्ड के करने पर पुण्य मानते हैं। इस प्रकार करने की खूब प्रशंसा करते हैं और सभी में इन की फलदायक कहानियाँ प्रचलित हैं।

किम् आश्चर्य अतः परम् –

यह इतने आश्चर्य की बात है कि इन श्रम–समय–व्यय साध्य धार्मिक कर्मकाण्डों को करते हुए कभी भी हम यह नहीं सोचते हैं, कि इन में कोई कार्य–कारण भाव, सार्थकता–निरर्थकता है? अर्थात् कोई इन पर ऐसा विचार नहीं करता। इनके करने पर बाद में अनेक समस्याएँ सामने आती रहती हैं। जैसे कि 8–11–2014 को श्री मोदी जी ने काशी में गंगा पूजा की। पूजा करते हुए उन्होंने अपने पूजा कराने वाले को कहा, कि थोड़ी से थोड़ी पूजा साम[illegible]र्ती जाए, क्योंकि बाद में प्रवाहित करने पर गंगा में प्रदूषण बढ़ेगा।

ऐसे ही 2014 की कार्तिक पूर्णिमा के स्नान पर कुरुक्षेत्र के ब्रह्मसरोवर में स्नान के बाद बहुत अधिक प्रवाहित पूजा सामग्री गन्द बनकर सामने आई। फिर उसको हटाने की विशेष व्यवस्था करनी पड़ी।

इससे बड़ा आश्चर्य यह है, कि मैं अपने धार्मिक कर्मकाण्ड को दूसरों से अनोखा मानना, कहता हूँ और हर एक का दावा होता है, कि 'इस जैसी तो कोई बात ही नहीं'। इतने पर भी मैं जैसा दूसरों पर विचार, जाँच करता हूँ। वैसी परख अपनी बातों की नहीं करता।

आजकल धार्मिक कर्मकाण्ड को करने और विशेष प्रतीकों को धारण की मान्यताओं के कारण ही आज के धर्म एक–दूसरे से अलग–अलग हैं। फिर इस अलगाव के भेद के कारण आपस में एक–दूसरे से दूरियाँ बढ़ाई जाती हैं। अपने से सम्बन्धित को अच्छा और दूसरों तथा उनसे सम्बन्धित को हलका माना जाता है। इसके लिए कई प्रकार के घृणा भरे शब्द भी वर्ते जाते हैं। जैसे कि म्लेच्छ, काफिर आदि। यही घृणा–पुनः ईर्ष्या–द्वेष, वैर–विरोध में बढ़ने लगती है। इसका बढ़ा हुआ रूप आज जेहाद व आतंक बनकर सामने आ रहा है।

आज धर्म के नाम से प्रचलित इन सभी में धर्म के चार रूप प्राप्त होते हैं। जैसे कि –

(1) नीतितत्त्व – सत्य, इमानदारी आदि, इसको सदाचार भी कह सकते हैं।

(2) धार्मिक कर्मकाण्ड – इष्ट–दर्शन–पूजन, ग्रन्थ–पाठ, भक्ति, जप–तप, स्मरण–ध्यान, तीर्थ–व्रत, प्रतीक धारण आदि।

(3) मान्यता – इसको विश्वास भी कह सकते हैं। जैसे कि – अपने इष्ट (देव) के दर्शन–पूजन से पुण्य, सर्वप्रकार की सिद्धि मानना। ऐसे ही पूर्व निर्दिष्ट कर्मकाण्ड के करने से अनेक प्रकार की सिद्धियाँ, सफलताएँ और पुण्य मानना, स्वर्ग प्राप्ति समझना। किसी विशेष वस्तु को पवित्र, पुण्यदायक मानना। इस प्रकार बिना किसी कारण आधार के केवल अपनेपन से किसी को विशेष महत्त्वपूर्ण मानना। इस तरह मानने से वह बात मान्यता कहलाती है। इसी तरह बिना किसी कारण, आधार के किसी से कुछ सिद्धि होने का विश्वास किये जाने से, समझने से वह–वह बात विश्वास कहलाती है। जैसे कि अपने धार्मिक कर्मकाण्ड से वह–वह फल, पुण्य समझना।

(4) दर्शन, सिद्धान्त – अपने धर्म, ईश्वर का विशेष प्रकार का स्वरूप प्रतिपादित करना, समझना, जानना। जैसे कि कर्मफल व्यवस्था सम्बन्धी सिद्धान्त।

ये चारों बातें सभी धर्मों में किसी न किसी मात्रा में अवश्य मिलती हैं। प्रचलित धर्मों के अन्दर चार में से नीति तत्त्व को छोड़कर तीन बातों में बहुत अधिक भिन्नता मिलती है। इसीलिए आपस में बहुत सारे मतभेद सामने आते रहते हैं। जिनके कारण प्रायः आपस में टकराव भी होता रहता है।

हाँ, धर्म का आचरण, अच्छाई, नीति वाला पक्ष ऐसा अवश्य है, जिसमें मतभेद बहुत कम हैं। फिर भी कर्मकाण्ड, विश्वास वाली बातों के कारण आपस में मतभेद प्रायः उभरा रहता है। इन मतभेदों से परस्पर फिर घृणा, ईर्ष्या, विवाद, विरोध की सम्भावना बनी रहती है।

इस पर स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न उभरता है, कि धर्म के सम्बन्ध में यह सब क्यों होता है। जब कोई इसकी गहराई में जाने का प्रयास करता है, तो स्पष्ट होता है, कि एक तो व्यक्ति के स्वभाव, रूचि की भिन्नता और स्वार्थ के कारण अर्थों में प्रयुक्त होता है, इसलिए भी मतभेद हो जाता है। जैसे कि आचरण कर्मकाण्ड, कर्तव्य, स्वभाव, विधि आदि।

182 शालीमार नगर
होशियार पुर, पंजाब

वेदों में पर्यावरण चिंतन

● प्रो. श्री राम अग्रवाल

पर्यावरण का सीधा सरल अर्थ है प्रकृति का आवरण। कहा गया है कि **'परितः आवृणोति'**। प्राणी जगत को चारो ओर से ढकने वाला प्रकृति तत्व, जिनका हम प्रत्यक्षतः एवं अप्रत्यक्षतः, जाने या अनजाने उपभोग करते हैं तथा जिनसे हमारी भौतिक, आत्मिक एवं मानसिक चेतना प्रवाहित एवं प्रभावित होती है, वही पर्यावरण है। यह पर्यावरण भौतिक, जैविक एवं सांस्कृतिक तीन प्रकार का कहा गया है। स्थलीय, जलीय, मृदा, खनिज आदि भौतिक, पौधे, जन्तु, सूक्ष्मजीव व मानव आदि जैविक एवं आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक आदि सांस्कृतिक तत्वों की परस्पर क्रियाशीलता से समग्र पर्यावरण की रचना व परिवर्तनशीलता निर्धारित होती है। प्रकृति के पंचमहाभूत – क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा– भौतिक एवं जैविक पर्यावरण का निर्माण करते हैं। वेदों में मूलतः इन पंचमहाभूतों को ही दैवीय शक्ति के रूप में स्वीकार किया गया है। मानव कृत संस्कृति का निर्माण मानव मन, बुद्धि एवं अहं से होता है। इसीलिए गीता में भगवान कृष्ण ने प्रकृति के पांच तत्वों के स्थान पर आठ तत्वों का उल्लेख किया है। **'भूमिरापोऽनलो वायु' खं मनो बुद्धि रेव च। अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिराष्टधा।।–'** (श्रीमद्भागवद्गीता अ–7/4)

वेदों में पर्यावरण से सम्बन्धित अधिकतम ऋचाएँ यजुर्वेद तथा अथर्ववेद में प्राप्त होती हैं। ऋग्वेद में भी पर्यावरण से सम्बंधित सूक्तों की व्याख्या उपलब्ध है। अथर्ववेद में सभी पंचमहाभूतों की प्राकृतिक विशेषताओं व उनकी क्रियाशीलता का विशद्– वर्णन है। आधुनिक विज्ञान भी प्रकृति के उन रहस्यों तक बहुत बाद में पहुंच सका है, जिसे वैदिक ऋषियों ने हजारों वर्ष पूर्व अनुभूत कर लिया था। इतना ही नहीं, वेदों में प्रकृति तत्वों से अनावश्यक व अमर्यादित छेड़छाड़ करने के दुष्परिणामों की ओर भी संकेत किया गया है तथा मानव को सीख भी दी गई है कि पर्यावरण संतुलन को नष्ट करने के दुष्परिणाम समस्त सृष्टि के लिए हानिकारक होंगे।

यजुर्वेद में पृथ्वी को ऊजा (उर्वरकता) देने वाली 'ताप्तायनी' तथा धन–सम्पदा देने वाली 'वित्तायनी' कह कर प्रार्थना की गई है कि वह हमें साधनहीनता/दीनता की व्यथा व पीड़ा से बचाए **'तप्तायनी मेसि वित्तायनी मेस्यवतान्मा नाथितादवतान्मा व्यथितात्।'** (यजुर्वेद 5/9)। अथर्ववेद के पृथ्वीसूक्त में 'क्षिति'–पृथ्वी–तत्व का मानव जीवन में क्या महत्व है तथा वह किस प्रकार अन्य चार प्रकृति तत्वों के संग, समायोजन पूर्वक क्रियाशील रह कर, उन समस्त जड़ चेतन को जीवनी शक्ति प्रदान करती है जिनको वह धारण किए हुए है, की विशद व्याख्या उपलब्ध है। अथर्ववेद में पृथ्वी को, अपने में सम्पूर्ण सम्पदा प्रतिष्ठित कर, विश्व के समस्त जीवों का भरण पोषण करने वाली कहा गया है। **'विश्वम्भरा वसुधानी प्रतिष्ठा हिरण्यवक्षा जगतो निवेषनी'** (अथर्ववेद 12/1/6) जब हम पृथ्वी की सम्पदा (अन्न, वनस्पति, औषधि, खनिज आदि) प्राप्त करने हेतु प्रयास करें तो प्रार्थना की गई है हमें कई गुना फल प्राप्त हो परन्तु चेतावनी भी दी गई है कि हमारे अनुसंधान व पृथ्वी को क्षत विक्षत (खोदने) करने के कारण पृथ्वी के मर्मस्थलों को चोट न पहुँचे। अथर्ववेद में पृथ्वी से प्रार्थना की गई है **'यतते भूमे विखनामि क्षिप्रं तदपि रोहतु। मा ते मर्म विमृग्वरि मा ते हृदयमर्पिपम्।।'** (अथर्ववेद 12/1/35) इसके गम्भीर घातक परिणाम हो सकते हैं। आधुनिक उत्पादन व उपभोग एवं अधिकतम धनार्जन की तकनीक ने पृथ्वी के वनों–पर्वतों को नष्ट कर दिया है। खनिज पदार्थों को प्राप्त करने हेतु अमर्यादित विच्छेदन कर पृथ्वी के मर्मस्थलों पर चोट पहुँचाने के कारण पृथ्वी से जलप्लावन व अग्नि प्रज्ज्वलन, धरती के जगह–जगह फटने व दरारें पड़ने के समाचार हमें प्राप्त होते रहते हैं। खानों में खनन करते समय इसी प्रकार की दुर्घटनाओं ने न जाने कितने लोगों की जानें ही नहीं ली अपितु उन क्षेत्रों के सम्पूर्ण पर्यावरण का विनाश कर उसे बंजर ही बना दिया है। वेदों में अग्नि (पावक) तत्व को सर्वाधिक शक्तिशाली एवं सर्वव्यापक माना गया है। उसे समस्त जड़–जेतन में ऊर्जा, चेतना तथा गति प्रदान करने वाला एवं नव सृजन का उत्प्रेरक माना गया है। अथर्ववदे में कहा गया है कि **'यस्ते अप्सु महिमा, यो वनेष य औशधीषु षु/पशुष्वप्स्वन्तः। अग्ने सर्वास्तन्वः संरभस्व तार्मिन एहिद्रविणोदा अजस्त्रः।।'** (अ. 11/3/2)– हे अग्निदेव आपकी महत्ता जल में (बड़गाग्नि रूप में) औषधियों व वनस्पतियों में (फलपाक रूप में), पशु व प्राणियों में (वैश्वानर रूप में) एवं अंतरीक्षीय मेघों में (विद्युत रूप में) विद्यमान हैं। आप सभी रूप में पधारें एवं अक्षय द्रव्य (ऐश्वर्य) प्रदान करने वाले हों। यजुर्वेद के अनुसार यही अग्नि द्युलोक (अंतरिक्ष से ऊपर परम प्रकाश लोक) में आदित्य (सूर्य) रूप में सर्वोच्च भाग पर विद्यमान होकर, जीवन का संचार करके धरती का पालन करते हुए, जल में जीवनी शक्ति का संचार करता है। **'अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथ्विया अयम्। अपारेतां सि जिन्वति।** (3/12)

पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति एवं समस्त गृह नक्षत्र मंडल सहित पृथ्वी द्वारा सूर्य की परिक्रमा के जिस तथ्य को आधुनिक विज्ञान आज केवल लगभग 200 वर्ष पूर्व ही समझ पाया है, उस भौगोलिक व सौर्य मण्डल के रहस्यपूर्ण तथ्य को हमारे वैदिक ऋषि हजारों वर्ष पूर्व अनुभूत कर चुके थे। अथर्ववेद में ऋषियों ने कहा है– **'मल्वं बिभ्रती गुरुभृद् भद्रपापस्य निधनं तितिक्षुः। वरोहण पृथिवी संविराना सूकराय कि जिहीते मृगाय।।'** (अ.वे. 12/1/48)– अर्थात गुरुत्वाकर्षण शक्ति के धारण की क्षमता से युक्त, सभी प्रकार के जड़ चेतन को धारित करने वाली, जल देने के साथ मेघों से युक्त सूर्य की किरणों से अपनी मलीनता (अंधकार) का निधन (निवारण) करने वाली पृथ्वी सूर्य के चारों ओर भ्रमण करती है।

वेदों में सभी ऋषियों ने सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में सूर्य की केन्द्रीय सत्ता को वैज्ञानिकता प्रदान की है जिसे कि आधुनिक विज्ञान अब क्रमशः समझ सकने में सक्षम हो पा रहा है। ऋग्वेद में कहा है– **'सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च'** (ऋ.वे.– 1.115.1)– सूर्य समस्त सृष्टि की आत्मा/जन्मदाता है। सूर्य से पदार्थों को पूर्णता तथा ज्योतिष विज्ञान के अनुसर मानव के जन्म के समय सूर्य तथा उसके आश्रित ग्रहों की स्थिति से मानव को समस्त गुण–सूत्र प्राप्त होते हैं। अथर्ववेद में सूर्यदेव को समस्त सृष्टि का प्रादुर्भावकर्ता, अवलम्बनकर्ता एवं स्वामी माना गया है। **'सवा अन्तरिक्षादजायत तस्मादन्तरिक्ष जायत'** (अ.वे.13/7/3) अर्थात सूर्य अंतरिक्ष से उत्पन्न हुए एवं अंतरिख उनसे उत्पन्न हुआ है। आगे कहा गया है– **'तस्यामू सर्वानक्षत्रा वशें चन्द्रमसा सह'** – (अ.वे.12/6/7)– अर्थात् चन्द्रता सहित समस्त नक्षत्र उनके ही वश में है। वे सूर्यदेव दिन, रात्रि, अंतरिक्ष, वायुदेव, द्युलोक, दिशाओं, पृथ्वी, अग्नि, जल, ऋचाओं एवं यज्ञ से प्रगट हुए हैं एवं ये सब भी सूर्य से ही प्रगट हुए हैं। उपरोक्त सभी के अंश, गुण व अणु सूर्य से विद्यमान रहे हैं एवं रहेंगे इसीलिए सूर्य से ये समस्त पदार्थ एवं पंचभूत उत्पन्न हुए हैं। सूर्य ही एक ऐसे देव हैं जिनसे आकाश (नक्षत्रलोक), जल एवं ऊर्जा एवं प्रकाश तथा कीर्ति एवं यश ('यश–अपयश विधि हाथ' – सूर्य राशि के अधीन) समस्त अन्न एवं उपभोग सामग्री, वनस्पति एवं औषधि इत्यादि सृष्टि को प्राप्त हुआ है। **'किर्तिश्च यशश्चाम्भश्च नभश्च ब्राह्मणवर्चसं चान्नं चान्नाद्यं च। य एवं देवमेकवृतं वेद।** अथर्ववेद 13/5/1 से 8)

निष्कर्ष रूप में, यह सम्पूर्ण पर्यावरण, प्रकृति आवरण, ही है जो विलक्षण दैवीय शक्तियों से व्याप्त है, जिससे सृष्टि के समस्त जंगम एंव स्थावर, प्राणी व वनस्पति को चेतना, ऊर्जा एवं पुष्टि प्राप्त होती है। **'द्योश्च म इदं पृथिवी चान्तरिक्षं चमेव्यचः। अग्नि सूर्य आपो मेधां विश्वेदेवाश्च सं ददुः।** (अथर्ववेद 12/1/53)– अर्थात द्युलोक, पृथ्वी, अंतरिक्ष, अग्नि सूर्य, जल एवं विश्व के समस्त देवें (ईश्वरीय प्रकृति शक्तियों) ने सृष्टि को व्याप्त किया है। इसीलिए यजुर्वेद में कहा गया है कि पृथ्वी इन समस्त शक्तियों को ग्रहण करें एवं इन सभी शक्तियों के लिए भी सदैव कल्याणकारक रहे। पृथिवी–पृथिवीवासी– इन दैवीय शक्तियों को प्रदूषित न करे। **'सन्तेवायुर्मातरिश्वा दधातूत्तानया हृदयं यद्विकस्तम्। यो देवानां चरसि प्राणथेन कस्मैदेव वषडस्तु तुभ्यम्।।** (यजुर्वेद–11/39) अर्थात् उर्ध्वमुख यज्ञकुण्ड की भाँति पृथ्वी अपने विशाल हृदय को मातृवत प्राणशक्ति संचारक वायु जल एवं वनस्पतियों से पूर्ण करें। वायुदेव दिव्य प्राणऊर्जा से संचारित होते हैं। अतः पृथ्वी (अपने दूषित उच्छ्वास–कार्बन उत्सर्जन) से उन्हें दूषित न करें। वर्तमान में अन्यथा की स्थिति के कारण ही वायु की प्राण पोषक शक्ति–ऑक्सीजन दूषित होकर सृष्टि के जीवन को दुष्प्रभावित कर रही है।

इस पर्यावरण के जनक इन पंचमहाभूतों से ही प्राणिमात्र की 5 ज्ञानेन्द्रियाँ प्रभावित एवं चेतन होती हैं। इन पंचमहाभूतों के गुण ही हमारी ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से प्राण, मन, बुद्धि, कौशल, अहं अर्थात् भौतिक, जैविक, आत्मिक एवं संस्कारिक पर्यावरण का निर्माण करते हैं। आकाश का गुण शब्द, वायु का गुण शब्द एव स्पर्श, तेज (पावक–अग्नि) गुण शब्द, स्पर्श एवं रूप; जल का गुण शब्द, स्पर्श, रूप एवं रस (स्वाद) तथा पृथ्वी समस्त उपरोक्त चारों गुण सहित सुगंध गुणों का धारण करती है। इसी कारण पृथ्वी के प्राणी पंचमहाभूतों के 5 गुणों को धारित करते हैं एवं उनसे प्रभावित भी होते हैं। अतः आवश्यक है कि हम पृथ्वी वासी पर्यावरण को दूषित न करें, छिन्न न करें अन्यथा हमें उनसे दूषित अवगुण ही प्राप्त होंगे। यह वैदिक ऋषियों द्वारा प्रस्तुत एक ऐसा सत्य है जिसकी वर्तमान में अवहेलना कर हम पर्यावरण संतुलन को समाप्त करते जा रहे हैं।

ऋषियों ने न केवल पर्यावरण को प्रदूषित करने के मानव जीवन एवं सृष्टि पर पड़ने वाले हानिकारक विनाशक परिणामों की ओर संकेत किया अपितु पर्यावरण की रक्षा एवं, हम जो कुछ प्रकृति देवों से प्राप्त कर रहे हैं। उसे उन्हें लौटा कर, पर्यावरण को प्रदूषित करने की अपेक्षा, उसे संरक्षित एवं सवंर्धित करने का भी आदेश दिया है। **'यदीमृतस्य पयसा पियानो नयन्नृतस्य पथिभीरजिष्ठैः। अर्यमा मित्रा वरूणः परिज्मा त्वचं पृन्चन्त्युपरस्य योनौ।।'** ऋग्वेद /1/79/3; (हे अग्निदेव) आप यज्ञ के रसों से चराचर जगत का पोषण करते हैं। यज्ञ के प्रभाव को सरल मार्गों से अंतरिक्ष में पहुँचाते हैं। तब अर्यमा, मित्र, वरूण एवं मरूदगण, मेघों के उत्पत्ति स्थल पर इनकी त्वचा में जल को स्थापित करते हैं। प्रकृति चक्र सब जगह व्याप्त है। यह चक्र प्राणियों के लिए अन्नादि पोषक पदार्थों को,

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

'काशी–शास्त्रार्थ' के डेढ़ सौ वर्ष और आर्य समाज का कर्त्तव्य

● भावेश मेरजा

काशी के पौराणिक पण्डित–मण्डल के साथ महर्षि दयानन्द जी का प्रसिद्ध 'काशी–शास्त्रार्थ' 16 नवम्बर 1869 को हुआ था। अतः 16 नवम्बर 2019 को इस महान् शास्त्रार्थ के डेढ़ सौ वर्ष पूरे होंगे। मैं समझता हूं कि इसको निमित्त बनाकर आर्य समाज कुछ ऐसा करने का संकल्प ले सकता है –

1. महर्षि दयानन्द जी तथा आर्य समाज के द्वारा मूर्तिपूजा का खण्डन करने के लिए इन डेढ़ सौ वर्ष में किए गए प्रयासों तथा उनसे मिली सफलता–विफलता का आर्य विद्वानों तथा सार्वदेशिक, प्रान्तीय सभाएँ तथा परोपकारिणी सभा के नेताओं द्वारा वस्तुनिष्ठ आकलन और चिन्तन।
2. "काशी–शास्त्रार्थ" का भूमिका सहित पूरा एवं प्रामाणिक विवरण सम्पादित कर एक 50–60 पृष्ठ की पुस्तक के रूप में हिन्दी, अंग्रेज़ी तथा प्रान्तीय भाषाओं में प्रकाशित करना।
3. मूर्तिपूजा के खण्डन में महर्षि जी के योगदान का सम्पूर्ण प्रमाण पुरस्सर वर्णन प्रस्तुत करती हुई 100–150 पृष्ठ की एक अन्य पुस्तक का लेखन कर उसे हिन्दी सहित विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित करना। इसमें टंकारा के शिव मन्दिर में हुई शिवरात्रि वाली प्रसिद्ध घटना से लेकर मूर्तिपूजा सम्बन्धित उनके सारे जीवन–प्रसंग, वार्तालाप, शास्त्रार्थ, शंका–समाधान, प्रवचन–अंश, सत्यार्थ प्रकाश तथा वेदविरुद्ध मत खण्डन आदि अन्य ग्रन्थों के एतद् विषयक प्रकरण आदि का समावेश हो।
4. मूर्तिपूजा के खण्डन में पण्डित गंगाप्रसाद जी उपाध्याय की अंग्रेजी पुस्तक Worship, उसका हिन्दी अनुवाद 'पूजा' तथा पण्डित राजेन्द्र जी रचित 'भारत में मूर्तिपूजा' के विशेष संस्करण प्रकाशित करना। ये पुस्तकें बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।
5. मूर्तिपूजा के समर्थन में मूर्तिपूजा–समर्थक विद्वानों द्वारा आज पर्यन्त दिए गए वैदिक तथा पौराणिक सभी शास्त्र प्रमाणों का संकलन कर उन सभी के सुगम सत्यार्थ तथा निराकरण को प्रस्तुत करने वाला एक ग्रन्थ हिन्दी में तैयार करना।
6. मूर्तिपूजा के समर्थन में मूर्तिपूजा–समर्थक विद्वानों द्वारा आज पर्यन्त दिए गए तर्क/कुतर्क, युक्तियों तथा दृष्टान्तों का संकलन कर उन सभी के ताकक समाधान को क्रमशः प्रस्तुत करने वाला एक ग्रन्थ हिन्दी में तैयार करना।
7. आर्य समाज मूर्तिपूजा का विरोध क्यों करता है? मूर्तिपूजा हानिकारक क्यों है? – यह संक्षेप में बताकर, 40–50 पृष्ठ की एक ऐसी विशेष पुस्तिका तैयार करना जो भारत के सभी मूर्ति पूजक मत–पन्थ–सम्प्रदायों तथा मजहबों के मुखियाओं तथा मठ–आश्रम–धार्मिक संस्थानों आदि के प्रमुख व्यक्तियों को (250–500 जितने भी हो) 16 नवम्बर 2019 से पूर्व पंजीकृत डाक से प्रेषित की जा सके। इसमें इस्लाम तथा ईसाई आदि मतों में जिस स्वरूप में मूर्तिपूजा का प्रचलन है, उसका भी समावेश किया जाए। इन सब महानुभावों के मत–पन्थ–सम्प्रदायों तथा मजहबों के नाम तथा डाक पते सहित पूरी सूची इसी पुस्तिका में दी जाए। साथ में इसी पुस्तिका में उन सभी को नम्रता पूर्वक यह भी निवेदन किया जाए कि –

यदि आपको आर्य समाज का मूर्तिपूजा विषयक यह मन्तव्य सत्य लगता है तो आप भी अपने मत–पन्थ–सम्प्रदाय या मजहब में प्रचलित मूर्तिपूजा को धीरे–धीरे कम कीजिए और यदि आपको आर्य समाज का मूर्तिपूजा विषयक यह मन्तव्य असत्य लगता है और आप चाहें तो आर्य समाज के 4–5 सुयोग्य विद्वानों के साथ "मूर्तिपूजा अ–वैदिक/वैदिक है", "मूर्तिपूजा योग या ईश्वर–प्राप्ति में बाधक/साधक है" – इत्यादि पक्ष को लेकर प्रीति पूर्वक सार्वजनिक शास्त्रार्थ कर सकते हैं। शास्त्रार्थ नहीं करना हो तो मूर्तिपूजा विषय पर गोष्ठी का भी आयोजन किया जा सकता है। कृपया अपने अभिप्राय की सूचना हमें एक मास के अन्दर अवश्य दीजिए। शास्त्रार्थ या गोष्ठी के नियत स्थान तथा समय आदि का निर्धारण दोनों पक्षों की सम्मति तथा अनुकूलता से किया जाएगा। इस शास्त्रार्थ या गोष्ठी के लिए जो खर्च होगा उसे दोनों पक्ष आधा–आधा वहन करेंगे।

ऐसा करने से शास्त्रार्थ, वाद–प्रतिवाद तथा संवाद आदि के माध्यम से विवादास्पद विषयों में सत्य मत की स्थापना कर ऐक्य मत निर्माण करने की हमारे देश की पुरातन परम्परा का भी पुनः प्रचलन होगा।

8. देश में प्रकाशित होने वाली सभी धार्मिक–सामाजिक पत्र–पत्रिकाओं के सम्पादकों को उपर्युक्त पुस्तिका भेंट रूप में प्रेषित करनी चाहिए।
9. फेसबुक, वोट्सएप आदि सोशल मिडिया पर आर्य समाज का मूर्तिपूजा विषय मन्तव्य प्रसारित करने के लिए इसी विषय पर 10–15 लेख और 1–2 वाक्य के 50–100 लघु सन्देश विद्वानों के द्वारा तैयार करा के आर्यों द्वारा उन्हें विशेष रूप से प्रसारित करने चाहिए। ऐसा करने से हमारे मन्तव्यों में एकसूत्रता भी बनी रहेगी।

उपर्युक्त बिन्दुओं के अतिरिक्त और इनसे भी प्रभावी अन्य सुझाव भी हो सकते हैं।

8–17 टाउनशिप, पो. नर्मदानगर,
जि. भरूच (गुजरात) – 392015
मो. 9879528247

☞ पृष्ठ 04 का शेष

इन्द्र व उसका सोमपान

लीयतेऽस्यां तस्मादात्रि अहिल्याः अर्थात् दिन जिसमें लीन हो जाता है उस रात्रि का नाम अहिल्या है। **'जृष वयो हानौ'** इस धातु से जार शब्द बना है, अर्थात् नष्ट करने वाला। इस परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो यह जो अश्लील एवं काल्पनिक कथा बना दी गई है, वह तो वास्तव में सूर्योदय और सूर्यास्त का बहुत ही मनोरम एवं हृदयग्राही आलंकारिक वर्णन है। जब इन्द्र (सूर्य) उदय होता है तब चन्द्रमा (गौतम) दूसरे छोर पर समुद्र की तरफ चला जाता है। उसके जाने पर सूर्य रात्रि रूपी अहिल्या को नष्ट (जारकर्म) कर देता है। जब सूर्य स्वयं अस्ताचल की तरफ जाता है उस समय अपनी किरणों (चरणों) के स्पर्श से जाते हुए भी अहिल्या (रात्रि) को पुनः जीवित कर देता है।

वास्तव में इन्द्र शब्द परमैश्वर्यार्थक 'इदि' धातु से उणादि 'रन्' प्रत्यय करके सिद्ध होता है। 'इन्द्र' के निरुक्त में प्रदर्शित कई निर्वचनों में से एक यह है"– **इन्दन् शत्रूणां दारयिता** (निरुक्त 10–9)। इसके अनुसार परमैश्वर्यार्थक 'इदि' धातु तथा विदारणार्थक 'दृ' धातु के योग से इन्द्र शब्द बना है। जो परमैश्वर्यवान् होता हुआ शत्रुओं का विदारण करता है, वह 'इन्द्र' है। महर्षि दयानन्द जी ने इन्द्र के परमेश्वर, जीवात्मा, विद्वान् पुरुष, वीर राजा, प्राण, वायु, सेनानी, शूरवीर योद्धा, विद्युत्, यज्ञ, सूर्यलोक, किसान एवं वैद्य आदि अर्थ किए हैं।

अधिदैवित क्षेत्र में सूर्य इन्द्र है और वृत्र हैं–अन्धकार या बादल आदि। अधिभूत क्षेत्र में राजा या सेनापति इन्द्र और वृत्र हैं–देश पर आक्रमण करने वाले शत्रु आदि और आध्यात्मिक क्षेत्र में आत्मा इन्द्र है और वृत्र हैं–अज्ञानान्धकार एवं पापकर्म आदि। इन समस्त दृष्टिकोणों से इन्द्र द्वारा सोम–पान करने की संगती लगाई जानी अपेक्षित है तभी इन्द्र तथा उसके द्वारा किए गए सोमपान के रहस्य को हम भली प्रकार से समझ सकते हैं।

इस सम्बन्ध में श्री वासुदेवशरण अग्रवालजी अपने 'ऊरू–ज्योति' ग्रन्थ में लिखते हैं– 'इन्द्र सोम पान करता है। वह सोम–सुत् है। यज्ञ का देवता है। यज्ञों में सोम पीता है। शरीरस्थ विधानों की पूर्ति एक यज्ञ है। श्रीकृष्ण ने कहा है – **अधियज्ञोऽहमेवात्र देहे देहभृतां वर।** (गी08–1) इस देह में व्याप्त आत्मप्रक्रियाएँ ही अधियज्ञ है। देहस्थ समस्त कर्मों के द्वारा आत्मा की ही उपासना की जाती है। आत्मा के लिए सब कर्म होते हैं। इस यज्ञ में सोम क्या है, और उसका भाग इन्द्र को कैसे पहुँचता है? वैदिक भाषा में ब्रम्हाण्ड या मस्तिष्क स्वर्ग है। इन्द्र की इन्द्रिय – शक्ति का निवास ब्रम्हाण्ड (Cerebrun) में ही रहता है। यहीं सब इन्द्रियों के केन्द्र हैं, जहां से इन्द्र प्राण ों का संचालन करता है। बाह्य संस्पर्शों के आदान–प्रदान की शक्तियाँ (Sensory and Motor Functions) प्राण हैं। उनका नियन्ता इन्द्र, ब्रह्माण्ड या स्वर्ग का अधिपति है। वह इन्द्र सोम पीकर अमरत्व लाभ करता है।.... इस प्रकार इन्द्र के सोम–पान में भारतीय ब्रम्हचर्य–शास्त्र का गूढ़ तत्व समाया हुआ है। शरीर की शक्ति को शरीर में ही पचा लेने के रहस्य का नाम सोम–पान है। यह शक्ति अनेक प्रकार की है। स्थूल भौतिक सोम शुक्र है जिसके द्युम्न या तेज से रोम–रोम चमक उठता है। रेत के भस्म होने से जो कान्ति उत्पन्न होती है... मस्तिष्क को सींचकर शुद्ध और बलवान् बनाना इसी रस का कार्य है। यह सोम रस, रेत या वीर्य – रूप से शरीर में संचित होता है। असंयम के कारण इसका शरीर से बाहर क्षय हो जाता है। जब तक प्राणापान – रूप अश्विनीकुमार इस सोम को पी सकते हैं, तब तक शरीर में जरा का आक्रमण नहीं होता। च्यवन की क्षीण शक्ति (Catabolic state of deplete energy) को फिर से ऊर्जित और बलिष्ठ बनाने के लिए यह आवश्यक है कि शरीर के सोम–रस से उत्पन्न शक्ति शरीर में ही रहे, अर्थात् प्राणापान उस सोम–रस का पान करें।

महादेव, सुन्दरनगर–175018
हि.प्र.

गतांक से आगे...

आओ चलें,

वैज्ञानिक धर्म एवं धार्मिक विज्ञान की ओर

● आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

मेरे मित्र महानुभावो! मैंने अब तक तो वेद धर्म को सत्य धर्म की शर्तों पर स्वबुद्धि के अनुसार यथार्थ पाया है। इस कारण मैंने विचार किया है कि वैदिक वाङ्मय से विज्ञान के गूढ़ रहस्यों को खोजकर आधुनिक वैज्ञानिकों के समक्ष प्रस्तुत किया जाये, वे उस पर प्रयोगशालाओं में अनुसंधान करें तो उन्हें जहाँ समय की बचत होगी वहीं उन्हें अनुसंधान हेतु नये–नये क्षेत्र प्राप्त हो सकेंगे। इसके साथ ही वैदिक विज्ञान की प्रमाणिकता भी उनकी दृष्टि में बढ़ेगी। मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि **वर्तमान विज्ञान कई बिन्दुओं पर अपने को असहाय अनुभव कर रहा है।** यदि कोई वेद के प्रति मेरी दृष्टि को मेरा पक्षपात माने तो उसे चाहिए कि वह जिसे अपना धर्म ग्रन्थ मानता है, उस पर गम्भीर अनुसंधान करके संसार के सम्मुख उसका सम्पूर्ण विज्ञान प्रकाशित करे। **मैं संकल्पित हूँ कि असहाय विज्ञान को वैदिक वैज्ञानिक रहस्यों के द्वारा नई दिशा प्रदान करूँ।**

मैं वेद को वर्तमान विज्ञान के पीछे नहीं बल्कि वर्तमान विज्ञान को वेद पीछे चलाने की भावना रखता हूँ और मुझे विश्वास है कि मैं ऐसा कर पाऊंगा। इससे उसकी श्रद्धा वेद की अन्य विद्याओं (यथा अध्यात्म, सामाजिक, राजनैतिक सिद्धान्त, यज्ञ, योग, गो विज्ञान, अर्थशास्त्र आदि) पर भी होगी। प्रबुद्धजनों को इस बात का भी अनुभव होगा कि वेद व वैदिक साहित्य किसी देश या वर्ग के लिए ही नहीं अपितु विज्ञानादि की भाँति समस्त सृष्टि के लिए हितकारी हैं। **संसार को धीरे–धीरे इस बात का भी ज्ञान होगा कि वेद किसी देश व वर्ग विशेष की सम्पदा नहीं बल्कि सभी मानवों की साझा सम्पत्ति है।** वेद उस काल का है, जब हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, जैन, बौद्ध, पारसी, ताओ, यहूदी, साम्यवादी, नास्तिक आदि वर्ग बने भी नहीं थे। तब समस्त भूमण्डल पर सभी केवल मानव ही कहलाते थे। उस समय देशों का प्रादुर्भाव भी वर्तमान रूप में नहीं हुआ था। **यह वेद ही समस्त ज्ञान–विज्ञान का मूल है, ऐसा जिस दिन सिद्ध हो जायेगा तो मुझे कोई कारण प्रतीत नहीं होता कि कोई प्रबुद्ध मानव इसे स्वीकार न करे। इससे बहुत आगे चल कर मैं वैदिक ऋचाओं को सृष्टि प्रक्रिया में उत्पन्न सूक्ष्म कम्पन (ऊर्जा) के रूप में सिद्ध कर सकूंगा।**

मेरे बन्धुवर! जिस बात को मैं यहाँ कह रहा हूँ उसे सिद्ध करना ही मेरे जीवन का लक्ष्य है। मेरा जीवन विश्व भर के प्राणिमात्र के समग्र हित चिन्तन के लिए है, न कि किसी मत पंथ का प्रचार करना मेरा प्रयोजन है। इसके लिए मैं धर्म व विज्ञान दोनों को परस्पर मिलाने के प्रयत्न का दृढ़ व्रती हूँ। विज्ञान से तात्पर्य सर्वत्र तकनीकी ज्ञान भी मैं ग्रहण नहीं करता। मैं समझता हूँ कि **बेरोक व अनावश्यक तकनीक मानव को आलसी, भोगवादी, गलाकाट–प्रतिस्पर्धी, अशांत व संघर्ष प्रिय बनाती है। मेरा ध्येय सृष्टि के गम्भीर व सूक्ष्म रहस्यों को जानकर महती चेतना परमात्मा की ओर वर्तमान विज्ञान को उन्मुख करना है। इससे मानव में आस्तिकता, दयाभाव, प्रेम, न्याय, सत्य आदि गुणों का उदय होगा। वह निरंकुश व स्वेच्छाचारी नहीं बनकर परमात्मा के आधीन चलेगा।**

इसीक्रम में परमाणु–नाभिकीय–कण–ब्रह्माण्ड – भौतिकी के गूढ़ तत्वों को वैदिक वाङ्मय से खोजना साथ–साथ आधुनिक विज्ञान की अवधारणाओं को समझना मेरी रुचि के विषय हैं। मेरी दृष्टि में उपर्युक्त विषय विज्ञान के सूक्ष्मतम विषय हैं, अन्य सभी विज्ञान इनसे किसी न किसी प्रकार जुड़े हुए हैं। मेरा दृढ़ मत है कि उपर्युक्त विषयों में आधुनिक विज्ञान, वैदिक विज्ञान से अनेकत्र नयी दिशा प्राप्त कर सकता है। बल, ऊर्जा व द्रव्यमान के रहस्यों को समझना भी इसी क्षेत्र का विषय होगा। इसके आगे अनेक उपयोगी तकनीकी विषय भी अनायास ही प्राप्त हो सकेंगे, ऐसी मैं सम्भावना करता हूँ। **आधुनिक विज्ञान उपर्युक्त विषयों में क्या–क्या भूल रहा है? तथा वर्तमान व मध्यकालीन वैदिकों ने क्या–क्या भूलें वैदिक ज्ञान को समझने में की हैं, इसका भी पूर्ण अनुमान मेरे मस्तिष्क में हो रहा है, ऐसा विश्वास है।**

मुझे इस दिशा में कार्य करते लगभग दस वर्ष ही व्यतीत हुये हैं। मैंने भारत के कई विश्व स्तरीय भौतिक वैज्ञानिकों की पर्याप्त संगति की है। विश्वभर में सृष्टि विज्ञान के क्षेत्र में हो रही प्रगति से भी निरन्तर अवगत होता रहता हूँ। उच्चस्तरीय वैज्ञानिक साहित्य भी पढ़ा है। सार यह है कि वर्तमान विज्ञान अनेकत्र उलझनों में फँसा है, अनेकत्र असहाय प्रतीत होता है। उस असहाय व उलझे वर्तमान विज्ञान को सहायता देना मेरा उद्देश्य है।

वैदिक वाङ्मय के अध्येता भी ऐसे भटक रहे हैं। वस्तुतः मिथ्या ज्ञान व अन्ध परम्परा के कारण ही आज वेदज्ञ ऋषि–मुनियों के महान ज्ञान विज्ञान का विनाश हो गया है। आर्य समाज भी अपने मार्ग से भटक गया है और वेद का मार्ग भ्रान्त होता जा रहा है। वैदिक वाङ्मय के अन्तर्गत मैं इस समय ऋग्वेद के ब्राह्मण (ऐतरेय ब्राह्मण) पर अपना वैज्ञानिक व्याख्यान लिख रहा हूँ। अब तक तीन चौथाई भाग से कुछ अधिक समाप्त हो गया है। इस रहस्यपूर्ण ग्रन्थ में अब तक प्रायः सभी भाष्यकारों ने इस ब्राह्मण ग्रन्थ में पशु बलि यज्ञादि कर्मकाण्ड आदि को ही पाया है परन्तु मैंने इस ग्रन्थ की महती वैज्ञानिकता को समझने का प्रयास किया है।

वेद विज्ञान मन्दिर, भागलभीम
भीनमाल, जिला–जालोर (राजस्थान)
पिन–343029
दूरभाष– 09414182173, 02969292103

कृतयशा

● शिवनारायण उपाध्याय

कृतयशा ऋग्वेद मण्डल 9 के सूक्त 108 की ऋचा संख्या 10 और 11 की दृष्टी हैं। इन ऋचाओं में बतलाया गया है कि परमात्मा शुभ कर्मी पुरुष को गतिशील बना देता है जिससे वह शक्ति सम्पन्न होकर उसकी समीपता प्राप्त कर लेता है।

आ वच्यस्व सुदक्ष चम्वोः सुतो विशां वह्निर्न विश्पतिः।
वृष्टिं दिवः पवस्व रीतिमपां जिन्वा गविष्टये धियः।।

ऋ. 9.108.10

अर्थ : – (सुदक्ष) हे सर्वक्ष परमात्मान्। आप (चम्वोः) प्रकृति तथा जीवरूप पदार्थों में (सुतः) सर्वत्र विद्यमान (विशाम्) सब प्रजाओं के (वह्निः) अग्नि के (नः) समान (विश्पतिः) नेता हैं, आप (आ वच्यस्व) हमें प्राप्त होवें, (दिवः) द्युलोक की (वृष्टिम्) वृष्टि को (पवस्व) पवित्र करें, (अपां, रीतिम्) कर्मों की गति को पवित्र करें, (गविष्टये) ज्ञान और (धियः) कर्मों की इच्छा करने वाले पुरुष को (जिन्व) अपनी शक्ति से परिपूर्ण करें।

भावार्थ :– जिस प्रकार अग्नि एक पदार्थ को स्थानान्तर को प्राप्त कर देती है वैसे ही परमात्मा ज्ञानी एवं शुभ कर्मी पुरुष को शक्ति सम्पन्न बनाकर अपनी समीपता उपलब्ध करा देता है।

एतमु त्यं मदच्युतं सहस्त्रधारं वृषभं दिवो दुहुः।
विश्वा वसूनि बिभ्रतम्।।

ऋ. 9.108.11

अर्थ : – (त्यमेतम्) उस उक्त परमात्मा को (मदच्युतम्) जो आनन्द से भरपूर (सहस्त्र धारम्) अनन्त शक्ति सम्पन्न (दिवो वृषभम्) द्युलोक से आनन्द की वृष्टि करने वाला (विश्वावसूनि) और जो सब ऐश्वर्यों के (बिभ्रतम्) धारण करने वाला है उसको (दुहुः) ज्ञान वृत्तियों से परिपूर्ण करते हैं।

भावार्थ :– परमात्मा आनन्दमय, सर्वशक्तिमान और द्युलोक से आनन्द की वृष्टि करने वाला है। उसी ने सब ऐश्वर्यों को धारण किया हुआ है। उस परमात्मा को ज्ञान वृत्तियों के द्वारा ही अनुभव किया जा सकता है। इतिशम्।

शास्त्री नगर, दादाबाड़ी कोटा

☞ पृष्ठ 02 का शेष

त्यागमयी देवियाँ

में जा पहुँचे, जहाँ पर पार्वती ने श्रद्धा से पुष्प–माला बनाकर उन्हें भेंट की थी। उस पुष्पमाला पर भी उनकी दृष्टि पड़ी, और फिर सुमन वाटिका से युद्धस्थल में पहुँचे जहाँ पार्वती और शुम्भ का युद्ध हो रहा था।

शुम्भ को आते देख पार्वती ने कहा, 'मैं तुम्हारा ही मार्ग देख रही थी। तुम मेरे ही दर्शन के अभिलाषी थे न! आओ, दर्शन करो और यमलोक को जाओ। तुम्हारे साथी वहाँ तुम्हारी प्रतीक्षा में हैं।'

शुम्भ ने कहा, 'मुझे इतना कच्चा न समझो! अभी तुम्हारी वीरता समाप्त हुआ चाहती है।'

पार्वती ने क्रुद्ध होकर कहा, 'बहुत बातें न बनाओ और आगे बढ़ो!'

अब तो घोर संग्राम आरम्भ हो गया। शस्त्र विद्या में दोनों निपुण थे। दोनों के वार काटे जा रहे थे। तब पार्वती के नेत्र लाल हो गए। आगे बढ़कर उसने खड्ग का एक भरपूर हाथ मारा। यदि शुम्भ की टोपी लोहे की न होती तो शीश कटकर नीचे गिर जाता, परन्तु लोहे की टोपी से देवी की खड्ग ही टूट गई। टूटी तलवार हाथ से फेंककर दूसरी तलवार लेने के लिए झुकी ही थी कि राक्षस शुम्भ ने निःशस्त्र देवी के बाल पकड़ लिए और उसे घुमाने लगा। पार्वती के मुख से निकला, 'शिव! प्राणनाथ शिव!'

उसी समय शिवजी वहाँ पहुँच गए। पार्वती की पुकार सुनते ही शिव जी का भयंकर त्रिशूल शुम्भ के वक्षस्थल को चीरता हुआ आर–पार हो गया। शुम्भ भूमि पर गिर पड़ा। पार्वती ने सचेत होते ही शिव जी के चरण पकड़ लिए। सारे युद्धस्थल में खुशी की तरंगें तरंगित हो उठीं–'पार्वती माता की जय! शिव जी महाराज की जय।' सारा स्थल गूँज उठा।

ऐसी थी पार्वती देवी, जिसकी सुन्दर कथा आपने पढ़ी है। आर्यावर्त का मस्तक ऐसी ही देवियों के प्रताप से ऊँचा है। इन्हीं का नाम ले–लेकर अब भी नारियाँ अपना चरित्र ऊँचा रखती हैं। आर्यावर्त की प्राचीन संस्कृति यही शिक्षा देती है। ऐसी ही देवियाँ जिन परिवारों में हों, वे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को प्राप्त कर लेते हैं। वही लोग सुख का जीवन व्यतीत करते हुए अपने जीवन के उद्देश्य को पा लेते हैं। पार्वती जैसी देवियों को बारम्बार नमस्कार है! इन्हीं देवियों से भारत का गौरव है। इन्हीं से हमारी संस्कृति सबसे ऊँची और पवित्र है, न कि उनसे, जो पश्चिमी सभ्यता में पड़कर अपने–आप को और अपने परिवारों तथा देश को भी नष्ट कर रही हैं।

शिक्षा –

पति–प्रेम से बड़ा कोई धर्म नहीं और,
देश–प्रेम से बड़ा कोई कर्त्तव्य नहीं।

नोट –आप अपने बालक तथा बालिकाओं को व्यावहारिक शिक्षा जरूर दें, जिससे देश की भावी सन्तान का जीवन सुन्दर बने। उनको महापुरुषों की जीवनियाँ पढ़ाके तथा धार्मिक शिक्षा देकर उन्हें देश की रक्षा के लिए तैयार करें।

क्रमशः

☞ पृष्ठ 06 का शेष

वेदों में पर्यावरण चिंतन

उपज रूपी शकट के माध्यम से पहुँचाता है। प्रजाओं (मानवों), को इन्द्रादि देवों द्वारा प्रदत्त अनुदानों (प्रकृति प्रदत्त संसाधनों) को यज्ञों – कर्मों के माध्यम से पुनः सब देवों तक पहुँचा कर सृष्टि चक्र संचालन में देवों का सहयोगी बनना चाहिए।

इसी कारण, ऋषियों ने सम्पूर्ण प्राकृतिक शक्तियों को शांत करने व लोक कल्याणकारी बनाए रखने की प्रार्थना की है। अथर्ववेद में उल्लेखित शांति सूक्त का पर्यावरण रक्षण में अपरिमित महत्त्व है **शान्ता द्यौः शान्ता पृथिवी शान्तमिदमुर्वन्तरिक्षम्। शान्ता उदन्वतीरापः शान्ता नः सन्त्वोषधीः।। (अ.वे. 19/9/1) शं नो मित्र शं वरूणः शं विष्णुः शं प्रजापतिः। शं नो इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो भवत्वर्यमा।।** (अ. वे. 19/9/6) **पृथिवी शान्तिरन्तरिक्षं शांतिर्द्यौःशान्तिरापः शान्तिरोषधयः शांतिर्वनस्पतयः शांतिर्विश्वे मे देवाः शान्ति' सर्वे मे देवाः शान्तिः शान्तिः शान्तिः शान्तिभिः। ताभिः शान्तिभिः सर्व शान्तिभिः शमयामोहं यदिह घोरं यदिह क्रूरं यदिह पापं तच्छान्तं तच्छिवं सर्वमेव शमस्तु नः।।'** – (अ.वे. 19/9/14) अर्थात् घुलोक, पृथ्वी, विस्तृत अंतरिक्ष लोक, समुद्र, जल, औषधियां ये सभी उत्पन्न होने वाले अनिष्टों का निवारण करके हमारे लिए सुख शांति दायक हों। दिन के अधिष्ठाता देव सूर्य (मित्र) रात्रि के अभिमानी देव वरूण, पालनकर्ता विष्णु प्रजापालक प्रजापति, वैभव के स्वामी इन्द, बृहस्पति आदि सभी देव शांत हों एवं हमें शांति प्रदान करने वाले हों। पृथ्वी, अंतरिक्ष, द्युलोक, जल औषधियां, वनस्पतियाँ एवं समस्त देव हमारे लिए शांतिप्रद हो। शांति से भी असीम शांति प्रदान करे। हमारे द्वारा किए गए घोर–अघोर कर्म, क्रूरकर्म, पापकर्म के फलों का शमन कर, शांत होकर हमारे लिए कल्याणकारी एवं मंगलकारी बने।

'हिन्दी विवेक' से साभार

☞ पृष्ठ 03 का शेष

ऋषि दयानन्द प्रतिपादित ...

करने के लिए कहा गया है जो अपनी प्रजा को सुख प्रदान कर सके, साथ ही शत्रुओं का उन्मूलन कर निष्कण्टक राजधर्म का प्रवर्त्तन करने में सक्षम हो।

'भूमिका' के राजधर्म के प्रकरण में अथर्ववेद के 'इन्द्रो ज्याति' तथा अन्य मन्त्रों के अतिरिक्त राजसभा एवं समिति विषयक अन्य मन्त्र (**तं सभा च समितिश्च** तथा **सभ्य सभां मे पाहि**) व्याख्या हित उद्धृत किये हैं। राजधर्म निरूपक इस प्रकरण को परिपूर्णता देने के लिए दयानन्द ने मन्त्र संहिता से भिन्न ब्राह्मण ग्रन्थों में आये इस विषय के प्रकरणों को भी यहाँ सन्निविष्ट कर दिया है। वे लिखते हैं कि– **''इयं राजधर्मव्याख्या वेदरीत्या संक्षेपेण लिखिताऽतोऽग्र ऐतरेयशतपथब्राह्मणादिग्रन्थरीत्या संक्षेपतो लिख्यते।''** राजधर्म की यह व्याख्या तथ्य की रीति से लिखी, अब आगे इस विषय को एतरेय तथा शतपथ ब्राह्मणों में आए वर्णनों के अनुसार लिखेंगे। प्रसंग के अनुरोध से ऐतरेय ब्राह्मण में वर्णित साम्राज्य, भोज्य, स्वराज्य वैराज्य पारमेष्ठ्य राज्य आदि विविध शासन प्रणालियों को व्याख्यात किया है, सथा ही शतपथब्राह्मण में आये 'राष्ट्रं वा अश्वमेधः' (13।1।6।1) आदि उद्धरणों की व्याख्या करते हुए **न्याययुक्त राज्य पालन को सच्चा अश्वमेघ यज्ञ बताया है।** इस प्रकार वेद संहिता एवं ब्राह्मण ग्रन्थ वर्णित राजधर्म की विवेचना के उपसंहार में दयानन्द इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं। कि वास्तव में प्रजातान्त्रिक मूल्यों पर आधारित राजव्यवस्था भारत में 'श्री मन्महाराज युधिष्ठिर पर्यन्त' बराबर चलती रही। दैव दुर्विपाक से महाभारत काल में जब यह व्यवस्था नष्ट हो गई तो आर्यों की स्वाधीनता भी स्थिर नहीं रही।

ऋषि दयानन्द की दृष्टि में राजधर्म की विवेचना कितनी महत्वपूर्ण थी, इसका पता इस तथ्य से भी लगता है कि स्वामीजी ने व्यवहारभानु तथा संस्कृत–वाक्यप्रबोध जैसे बालकों को सामान्य शिष्टाचार सिखाने वाले लघु ग्रन्थों में भी प्रसंग आने पर इस अत्यावश्यक विषय की चर्चा की है। प्रथम हम व्यवहारभानु की चर्चा करें। इसमें रोचक दृष्टान्तों एवं कथा कहानियों की सहायता से राजसभा में खुशामदी दरबारियों से होने वाली हानियों की बात आई है। यहीं पर राजमहल में धार्मिक अनुष्ठान करने वाले एक लोभी पुराहित तथा दानाध्यक्ष के दृष्टान्त से राजकोष की लूट को दर्शाया गया है। साथ ही अन्धेर नगरीवाला लोक आख्यान देकर स्पष्ट किया है कि किस प्रकार मूर्ख राजा और चाटुकार सभासद अन्धेर नगरी के राजा को विनाश के गर्त में धकेल देते हैं। स्मरणीय है कि ऋषि दयानन्द के समकालीन भारतेन्दु हरिचन्द्र ने भी अन्धेरनगरी नामक प्रहसन इसी कथानक को लेकर लिखा था। सम्भवतः दोनों लेखकों ने किसी समान स्रोत से इसका कथानक लिया हो।

अब संस्कृत–वाक्यप्रबोध को लें। संस्कृत सम्भाषण का अभ्यास कराने के लिए लिखी गई पठन–पाठन व्यवस्था की इस पुस्तक में राजप्रजा सम्बन्ध तथा साक्षि–प्रकरण ऐसे हैं जो न्यायव्यवस्था को लेकर दयानन्द के गम्भीर सोच को दर्शाते हैं। किसी से ऋण लेने और समय पर न चुकाने, तत्पश्चात् में वाद प्रस्तुत करने तथा इस प्रकारण में साक्षियों को बुलाकर सत्यासत्य को जानने जैसे न्यायालय से जुड़ी समस्याओं को लेखक ने गम्भीरता से उठाया है। आश्चर्य है कि सांसरिक लौकिक समस्याओं से स्वयं को निर्लेप रखनेवाले सन्यासी दयानन्द को मुकदमे मामलों में होने वाली अनियमितताओं तथा धांधलियों से कितनी पीड़ा होती थी।

राजसभा को लेकर इसी ग्रन्थ में एक अन्य प्रकरण है। इसमें राजसभा के संगठन, युद्ध से उत्पन्न परिस्थितियों तथा अपने राष्ट्र की स्वतन्त्रता की रक्षा में तत्पर तत्कालीन अफगान लोगों के अंग्रेजों से युद्धरत होने की तात्कालिक घटनाओं को बखूबी चित्रित किया गया है। दयानन्द की दृष्टि में मनुष्य का यह जन्मजात स्वभाव है कि वह प्रत्येक स्थिति में अपने स्वत्व की रक्षा में तत्पर रहता है। उनका कथन है कि जब पशु–पक्षी भी अपने घोंसले की येन–केन प्रकरेण रक्षा करते हैं तो मानव स्वदेश की रक्षा में तत्पर क्यों नहीं होगा। ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों में आये ऊपर विवेचित सभी प्रसंग उनकी राज्य–प्रशासन एवं राजधर्म विषयक जागरूकता के परिचायक हैं।

पुनश्च–ऋषि दयानन्द के राजधर्म विषयक विचारों को यहाँ अत्यन्त संक्षेप में लिखा गया है। विस्तार के लिए निम्न ग्रन्थ पठनीय हैं–

1. ऋषि दयानन्द का वैदिक स्वराज्य–चन्द्रमणि विद्यालंकार
2. ऋषि दयानन्द और राजधर्म–इन्द्र विद्यावाचस्पति
3. ऋषि दयानन्द राजनैतिक दर्शन– प्रो. श्रीप्रकाश
4. महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित
5. महर्षि दयानन्द का राजनीति शास्त्र – लक्ष्मीदत दीक्षित
6. Political thought of Dayanand by Dr. Shanta Malhotra.

प्रस्तुतकर्ता डॉ. गौर मोहन माथुर
3/5, शंकर कालोनी
श्रीगंगानगर – 335001 (राज.)
दूरभाषः 0154–2466299

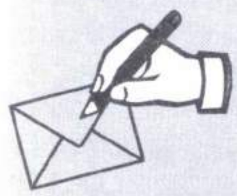

पत्र/कविता

ओ३म् की उपासना

यह ओ३म् नाम है सब से प्यारा, इसे भज लो प्रेम से सच्चे मन के द्वारा।
शुद्ध आचरण और अष्टांग योग से मोक्ष मिलता है, नहीं कोई मार्ग है न्यारा।।

ईर्ष्या, द्वेष, घृणा के भाव मिटा दो, प्रेम, दया करुणा, सहानुभूति की नदी बहा दो,
सारे विश्व को यह बतला दो, परोपकार करना ही होता सर्वोत्तम धर्म हमारा।।
यह ओ३म् ....

काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह को त्यागो, कर्त्तव्य पालन से कभी दूर न भागो,
राष्ट्र को जगाओ और तुम भी जागो, जिस पर रहता देश निर्भर सारा।।
यह ओ३म् ....

वेद–शास्त्रों को जो पढ़ता है, संयम, सदाचार और ब्रह्मचर्य से जो रहता है,
हृदय में श्रद्धा, प्रेमभाव जिसके बहता है, वही होता है जग में सबका दुलारा।।
यह ओ३म् ....

सन्ध्या, हवन जो नित्य करता है, दीन–दुःखियों के दुःखों को हरता है,
वह कभी किसी से नहीं डरता है, ईश्वर देता रहता उसे सदा सहारा।।
यह ओ३म् ....

ईमानदारी से जो व्यापार करता है, निःस्वार्थ भाव से जो व्यवहार करता है
जो हंसते–हंसते सब दुःखों को सहता है, उसका बनता है जीवन सुखमय सारा।।
यह ओ३म् ....

योग–आसन व ध्यान जो करता है, शुद्ध, सात्विक भोजन का पान जो करता है,
स्वाध्याय से प्राप्त जो ज्ञान करता है, उसे आनन्द मिलता जग में सबसे न्यारा।।
यह ओ३म् ....

व्यक्ति जो संयमी, सदाचारी है, वह गृहस्थी होता हुआ भी ब्रह्मचारी है,
इसीलिए राम–कृष्ण की महिमा न्यारी है, वे ईश्वर सम कहलाये अपने चरित्र के द्वारा।
यह ओ३म् ....

जो ओ३म् नाम नित्य जपता है और जीवन में शुभ, पवित्र कर्मों को करता है,
"खुशहाल" निश्चय से कहता है, वही पाता है मोक्ष जो अन्तिम होता लक्ष्य हमारा।।
यह ओ३म् ....

खुशहाल चन्द्र आर्य
180 दो तल्ला महात्मा गाँधी रोड़
कोलकत्ता –700007

स्वातन्त्र्य वीर सावरकर की 136वीं जयन्ती दिनाँक 28 मई 2019

आप 1937 में हिन्दू महासभा में आए। 1938 में आपको राष्ट्रीय अध्यक्ष बना दिया गया। आपने अहमदाबाद अधिवेशन में अध्यक्षीय भाषण में घोषणा कर दी कि अब हिन्दू महासभा को राजनीतिक दल घोषित किया जाता है और कांग्रेस से सम्बन्ध समाप्त किए जाते है। कार्य करने का आधार होगा – (1) राजनीति का हिन्दूकरण और हिन्दूओं का सैनिकीकरण (2) धर्म परिवर्तन से राष्ट्रीयता बदल जाती है। आप लगातार छह वर्ष तक राष्ट्रीय अध्यक्ष रहे। उनके द्वारा दिए गए भाषणों से पार्टी का विस्तार हुआ और प्रभाव बढ़ा।

हिन्दू महासभा के राजनीतिक दल बनते ही मालवीय जी ने घोषणा कर दी कि वे अब कांग्रेस में ही रहेंगे। 1946 में जब मालवीय जी को पता चला कि कांग्रेस धर्म के आधार पर देश का विभाजन स्वीकार करने वाली है तब उन्होंने हिन्दू महासभा छोड़ने को जीवन की सबसे बड़ी गलती माना लेकिन मालवीय जी के अनुयायी वही गलती लगातार कर रहे हैं।

असम में नागाओं को ईसाई बनाया जा रहा था तब 1940 में आपने नागाओं का धर्म परिवर्तन रोकने की माँग की थी, जिसकी ओर कोई कार्रवाई नहीं की गई। स्वतन्त्र भारत में धर्म परिवर्तन जारी रहा। धर्म बदल कर नागा हिंसक – गोभक्षक और देश द्रोही हो गए। 1963 में ईसाई समर्थक नेहरू सरकार को असम को विभाजित करके ईसाई धर्मी नागालैण्ड नाम का राज्य बनाना पड़ा। अब वे ग्रेटर नागा लैन्ड की माँग कर रहे हैं।

जम्मू–कश्मीर रियासत के बारे में आपने 1941 में चेतावनी दी थी जिसका ध्यान नहीं रखा गया। आज आधी रियासत चीन और पाकिस्तान के अवैध कब्जे में है जबकि आधे पर विवाद चल रहा है। यदि पटेल ने विलय कराया होता तो पूरी रियासत भारत के पास होती और मुख्यमंत्री सदैव हिन्दू ही बनता तब पाकिस्तान मौन रहता।

2 अगस्त 1942 को आपने भविष्यवाणी की थी कि कांग्रेस का भारत छोड़ो आन्दोलन, भारत तोड़ो आन्दोलन बन जाएगा जो 1947 में सही सिद्ध हुआ जब कांग्रेस ने पाकिस्तान बनाने की माँग स्वीकार कर ली।

मुर्दा – नासमझ हिन्दुओं को मुस्लिम तुष्टीकरण नीतियाँ सही लगीं अतः उन्होंने गांधीवाद का समर्थन किया और अभी तक कर रहे हैं। हिन्दू महासभा को 1945–46 के चुनावों में 16 प्रतिशत वोट मिली थी। अब लालची–कुर्सीवादी हिन्दुओं ने हिन्दू महासभा को मृत प्रायः की स्थिति में पहुँचा दिया है। खंडित भारत से गांधी ने एक तिहाई मुस्लिमों को जबर्दस्ती पाकिस्तान नहीं भेजा। 71 वर्षों में उनका प्रतिशत 10 से बढ़कर 17 हो गया है। वे अभी भी आक्रामक हैं और हिन्दू बचावकारी। मुस्लिम लीग ने 1947 में नारा लगाया था – हंसकर लिया है पाकिस्तान, लड़कर लेंगे हिन्दुस्तान। पाकिस्तान इसी नीति पर चलकर आंतकवादी भेजता है। सावकरवाद को अपनाकर आक्रामक सोच का बनकर हिन्दू शान से रह सकता है।

इन्द्रदेव, संस्थापक हिन्दू महासभा
18/186, टीचर्स कॉलोनी,
बुलन्दशहर उ.प्र.
मो. 8958778443

शर्मनाक : तीन साल की मासूम को दूध की बोतल में शराब देता था पिता

दिल्ली के प्रेम नगर में हुई यह घटना 'अमर उजाला' ने रिपोर्ट की। ऐसी दुखद एवं अमानवीय घटनाएँ निरन्तर जारी हैं क्योंकि शराब बन्दी केवल 5 राज्यों में ही लागू है। गाँधी जी ने पूर्ण शराब बन्दी का वायदा किया था जबकि नेहरू ने संविधान बनवाते समय शराब बन्दी को राज्यों का विषय बनवा दिया। नित्य सैकड़ों परिवार शराब के कारण बर्बाद हो रहे हैं।

राज्य सरकारों को मोटी रकम शराब के उत्पादन तथा बिक्री से प्राप्त होती है इसलिए वह दुकानें बढ़वाकर जनता के जीवन को बर्बाद कर रही हैं। देश में दूध की जगह शराब की नदियाँ बह रही हैं फिर भी संविधान को उत्तम कहा जाता है।

समाज कल्याण विभाग को शराब के विरुद्ध अच्छी मात्रा में प्रचार करना चाहिए। सरकारें अनुदान बढ़ाएँ।

रामकुमार
18/186, टीचर्स कॉलोनी
बुलन्दशहर (उ.प्र.)

****

आलोचना अशिष्टता का परिचायक है

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सम्पूर्ण विश्व को गायत्री मंत्र की भेंट दी इस भेंट में कहीं भी यह उल्लेख नहीं है कि आप आलोचना करो।

सम्पूर्ण वातावरण में अनेक परिन्दे निवास करते हैं। कोयल जैसा पक्षी अपनी सुरीली आवाज से सम्पूर्ण विश्व को लुभाता है वहीं चील, कौवे से सभी घृणा करते हैं।

समस्त आर्य विद्वानों से नम्र निवेदन है कि आलोचना शब्द का प्रयोग कदापि न करें।

आलोचना अशिष्टता का परिचायक है। आर्य शब्द सहिष्णुता का प्रतीक है।

कृष्ण मोहन गोयल
113 बाजार कोट अमरोहा

****

एम.एल.खन्ना डी.ए.वी. द्वारका में मनाया गया महात्मा हंसराज जन्म दिवस

एम.एल.खन्ना डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल द्वारका में महात्मा हंसराज जन्मदिवस एवं विद्यालय स्थापना दिवस का आयोजन धूमधाम से किया गया। इस अवसर पर विद्यालय के समस्त छात्र–छात्राएँ तथा शिक्षकगण उपस्थित थे।

कार्यक्रम का आयोजन आर्य युवा समाज के तत्त्वावधान में किया गया। कार्यक्रम का शुभारम्भ विद्यालय प्राचार्या श्रीमती मोनिका मेहन द्वारा ओ३म् ध्वजारोहण से हुआ। विद्यालय के संगीत विभाग द्वारा ध्वजगीत और आर्य समाज के भजन आदि प्रस्तुत किए गए।

कक्षा सातवीं के छात्र स्वागत पांडा और भूमिका रावत ने महात्मा हंसराज जी एवं स्वामी दयानन्द जी पर अंग्रेजी तथा हिन्दी भाषा में अपने अपने विचार प्रकट किए। इस अवसर पर आर्य युवा समाज के छात्र सदस्यों द्वारा महात्मा हंसराज जी एवं स्वामी दयानन्द जी पर एक लघु नाटिका का मंचन भी किया।

विद्यालय प्राचार्या ने सभी को संबोधित करते हुए कहा कि – महात्मा हंसराज जी का जीवन परोपकार के लिए था, उनका जीवन एक आदर्श जीवन था धार्मिक विचारधारा से पूर्णतया ओतप्रोत था और इसका कारण केवल तत्कालीन समय में आर्य समाज की प्रखर वैचारिक विचारधारा थी।

उन्होंने कहा वैदिक जीवन मूल्यों का महत्त्व सदा से रहा है, और आज के समय में भी हमें जीवन मूल्यों को समझना और उनपर अमल करना चाहिए। श्रेष्ठ समाज के निर्माण में अपना योगदान देते रहना चाहिए।

दयानन्द महाविद्यालय सोलापुर में यज्ञ तथा अखिल भारतीय नैतिक शिक्षा प्रतियोगिता

द. भै. फ. दयानंद कला एवं शास्त्र महाविद्यालय, सोलापुर द्वारा महात्मा आनंद स्वामी वुमेन्स छात्रावास में यज्ञ का आयोजन किया गया। इस यज्ञ के लिए दयानंद शिक्षण संस्था के स्थानीय सचिव श्री महेश चोपड़ा, दयानंद कला एवं शास्त्र महाविद्यालय के प्रधानाचार्य डॉ. वी.पी. उबाले, शिक्षणशास्त्र महाविद्यालय के प्रधानाचार्य डॉ. एस.बी. क्षीरसागर, दयानंद वाणिज्य महाविद्यालय के प्रधानाचार्य डॉ.

के.ए. पांडे तथा दयानंद विधि महाविद्यालय के प्रधानाचार्य डॉ. यु.एम. राव, छात्रावास के अधीक्षक डॉ. जी.एस. शहणे और छात्रावास की सभी छात्राएँ इस पुनीत सुअवसर पर उपस्थित थीं।

द. भै. फ. दयानंद कला एवं शास्त्र महाविद्यालय, सोलापुर हिंदी विभाग द्वारा अखिल भारतीय नैतिक शिक्षा प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसमें लगभग 70 छात्रों ने भाग लिया।

आर्य समाज सागरपुर में श्री राम जन्मोत्सव

आर्य समाज सागरपुर नई दिल्ली में श्री रामचन्द्र महाराज का जन्म दिवस बड़ी धूमधाम एवं हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। इस समारोह में सैकड़ों स्त्री–पुरुषों व बच्चों ने बढ़–चढ़ कर भाग लिया।

इस अवसर पर प्रभात फेरी निकाली गई तथा देवयज्ञ सम्पन्न कराया। यज्ञोपरान्त विशेष सभा का कार्यक्रम हुआ जिसमें आर्य जगत के प्रख्यात वैदिक विद्वान् पं. नन्दलाल निर्भय कविरत्न ग्राम बहीन (पलवल) हरियाणा ने अपने सारगर्भित प्रवचन में भगवान श्री रामचन्द्र जी को देवपुरुष एवं मानवता का महापुंज बताया।

पं. नंदलाल निर्भय ने स्पष्ट किया कि ईश्वर अजन्मा अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वव्यापक सर्वज्ञ तथा सर्वान्तर्यामी है। ईश्वर कभी जन्म–मरण के चक्कर में नहीं पड़ता। जीव ही जन्म मरण के बन्धन में आता है, तथा ईश्वर जीव को उसके कर्मो के अनुसार उचित फल देता है, क्योंकि वह दयालु और न्यायकारी है।

अवतार का अर्थ उतारना है ईश्वर के सद्गुणों को ओ व्यक्ति अपने जीवन में उतार लेता है वह सच्चा ईश्वर भक्त धर्मात्मा माना जाता है। ऐश्वर्यशाली को भगवान कहते हैं। जिसके पास वेद, विद्या, त्याग–तपस्या, धन–दौलत, विशेष बल, परोपकार दया आदि सद्गुण हैं वही व्यक्ति भगवान कहाता है।

श्री राम न्यायकारी, दयालु, परोपकारी, धर्मात्मा और सदाचरी प्रजापालक थे। वे माता–पिता के आज्ञापालक थे। श्री राम ने जीवन में ऋषियों–मुनियों, विद्वानों की सेवा की तथा बाली, रावण, कुंभकरण जैसे अत्याचारियों का संहार करके संसार को सुखी किया। वस्तुतः श्री राम सच्चे पुत्र, सच्चे भ्राता, आदर्शपति, आदर्शराजा, आदर्श मित्र तथा सच्चे ईश्वर भक्त थे। इसीलिए हमें भी तो श्री राम के सद्गुणों को अपने जीवन में धारण करना चाहिए तभी हमारा सबका कल्याण होगा।

शांति पाठ प्रसाद वितरण के पश्चात समारोह का समापन हुआ

☞ पृष्ठ 01 का शेष

पटना में उपसभा ...

को प्रसाद वितरण किया गया।

दिनांक 9 मई 2019 को डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल वाल्मी काम्पलेक्स, फुलवारीशरीफ, पटना एम्स के सामने भजन–संध्या का आयोजन हुआ। दीप प्रज्ज्वलन के पश्चात् भजन संध्या आरंभ हुई। प्राचार्या ने अतिथियों का आभार प्रकट करते हुए इस कार्यक्रम के लिए उपसभा प्रधान डॉ. यू.एस. प्रसाद का आभार प्रकट किया।

डॉ.यू.एस. प्रसाद ने डी.ए.वी. संस्थाओं में शिक्षा के क्षेत्र में किए जाने वाले कार्यों की प्रशंसा करते हुए अभिभावकों एवं बच्चों में अच्छे संस्कारों को भरने की बात कही।

संगीत शिक्षक–शिक्षिकाओं को शॉल ओढ़ाकर उपसभा के पदाधिकारियों द्वारा अभिनन्दन किया गया। शान्तिपाठ एवं जयघोष के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ सभी को प्रसाद वितरण किया गया।

भजन संध्याओं की इस श्रृंखला को सफल बनाने के लिए तमाम आला अधिकारियों शिक्षक–शिक्षिकाओं, भजन गायकों, एवं संगीतज्ञों का विशेष योगदान रहा। सभी ने चारों भजन–संध्याओं में सम्मिलित होकर अपनी शुभकामनाओं से कार्यक्रम को गौरव प्रदान किया। मंच संचालन श्री अरविन्द शास्त्री ने किया तथा भजन संध्या को औचित्य को बताते हुए कार्यक्रम का समापन किया।

Registration No. R.N.I. 39\57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2018-20
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103\2018-20
Posted at N.D.P.S.O. ON 22/23-05-2019

डी.ए.वी. बक्सर में भजन संध्या

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल स्टेशन रोड बक्सर में आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग नई दिल्ली एवं आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा पटना बिहार के मार्गदर्शन में "भजन संध्या" का आयोजन किया गया।

कार्यक्रम प्रारंभ करने के पूर्व सभी गणमान्य अतिथियों सहित डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल के प्राचार्य और अध्यापकों ने मिलकर यंज्ञ किया।

कार्यक्रम की शुरुआत मुख्य अतिथि पूर्वप्रधान श्री सुरेन्द्र कुमार जयसवाल एवं प्राचार्यगणों के द्वारा दीप प्रज्ज्वलन करके की गई।

भजन संध्या का प्रारंभ डी.ए.वी. गान से किया गया।

श्री वेद प्रकाश पाठक, आरा के द्वारा– ओंकार प्रभु तेरा नाम....., श्री अजीत कुमार मलिक बिक्रमगंज ने– मेरा जीवन तेरे हवाले ....., श्री नित्यानंद मिश्र, बिक्रमगंज ने– अब सौप दिया इस जीवन का ....., श्री घनश्याम कुमार, मोहनिया ने– नाम भज लें प्रभु का ....., श्री सकंटमोचन मिश्र, बक्सर ने– दुनिया में त्रैतवाद का प्रचार होना चाहिए....., और श्रीमती स्वागता पाल तथा सुश्री नेहा पौद्दार तथा जय मुखर्जी एवं मृणमय डे ने – प्रभु मोहे कुन्दन कीजो...... आदि भजनों से समस्त श्रोताओं को आनंद का आस्वादन कराया।

भजन संध्या के बाद प्राचार्य सह क्षेत्रीय निदेशक श्री आशीष कुमार जाना ने आर्य समाज की स्थापना और डी.ए.वी. आन्दोलन पर प्रकाश डांला। कार्यक्रम के अंत में डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल मोहनिया के प्राचार्य श्री ए.क. बक्शी के द्वारा सभी अतिथियों को धन्यवाद दिया गया और परंपरा के अनुसार श्री नित्यानंद शास्त्री एवं श्री अजय कुमार उपाध्याय के द्वारा शांति पाठ करके सभा का समापन किया गया।

डी.ए.वी. मॉडल स्कूल सैक्टर 15ए, चण्डीगढ़ में 'बालसखा यज्ञ' का आयोजन

डी.ए.वी. मॉडल स्कूल सैक्टर 15ए, चण्डीगढ़ में पहली कक्षा एवं दूसरी कक्षा के विद्यार्थियों ने साथ मिलकर "बालसखा यज्ञ" का आयोजन किया।

लगभग 200 विद्यार्थियों ने इस पवित्र यज्ञ में बड़े हर्षोल्लास से भाग लिया और बड़ी प्रसन्त्ता का अनुभव किया। कार्डिनेटर श्रीमती हेमापुंज यजमान बनी तथा बालसखाओं से संबन्धित अध्यापिकाओं ने यज्ञ में सम्मिलित होकर इस कार्यक्रम को सफल बनाया। विद्यालय के धर्माचार्य–आचार्य रमेश शास्त्री ने यज्ञ को सम्पन्न कराया व सभी बालसखाओं को आशीर्वाद देकर उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना की।

बालसखा यज्ञ के लिए बच्चों के माता–पिता व अभिभावकों ने अपने अपने घर से पूरी, सब्जी व हलवा बनाकर भेजे थे जिसे इन्ही बालसखाओं के बीच 'ऋषिलंगर के रूप में वितरित किया गया।

एम.बी. डी.ए.वी लोहरदगा में पुरस्कार वितरण उत्सव

एम.बी. डी.ए.वी पब्लिक स्कूल में टॉपर्स विद्यार्थियों के लिए सम्मान सह पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया, जिसमें विद्यालय में अध्ययनरत सत्र 2018–19 के विभिन्न कक्षाओं के टॉपर्स विद्यार्थियों को सम्मानित किया गया।

मुख्य अतिथि अधीक्षक लोहरदगा, श्री प्रियदर्शी आलोक तथा प्राचार्य श्री जी.पी. झा ने संयुक्त रूप से प्रथम कक्षा से लेकर बारहवीं कक्षा तक के सर्वोच्च प्राप्तांक वाले टॉपर्स को पुरस्कार तथा प्रमाण–पत्र देकर सम्मानित किया तथा उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना की। समारोह में विशेष रूप से सी.बी.एस.सी दसवीं तथा बारहवीं के जिला टॉपर्स रहे प्रियेश राज तथा चंचला खुशी को सम्मानित किया गया।

विद्यालय के प्राचार्य श्री जी.पी. झा ने मुख्य अतिथि लोहरदगा एस.पी. श्री प्रियदर्शी को शॉल व प्रतीक चिह्न देकर सम्मानित किया।

मुख्यअतिथि ने टॉपर्स समेत सभी विद्यार्थियों को सफलता के कई सूत्र दिए। उन्होंने विद्यार्थियों को प्रेरित करते हुए कहा कि लक्ष्य प्राप्ति के लिए लक्ष्य का निर्धारण अनिवार्य है। उन्होंने अपने विद्यार्थी जीवन का अनुभव बांटते हुए कहा कि समय के सदुपयोग और मेहनत से कोई भी लक्ष्य पाना संभव है।

समारोह में मुख्य अतिथि तथा टॉपर्स विद्यार्थियों व अभिभावकों का स्वागत छात्राओं ने पारंपरिक वेश–भूषा में किया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**